दृष्टि The Vision

एडिटोरियल

(संग्रह)

अगस्त भाग-2, 2020

दृष्टि, 641, प्रथम तल, डॉ. मुखर्जी नगर, दिल्ली-110009
फोन: 8750187501
ई-मेल: online@groupdrishti.com

अनुक्रम

संवैधानिक/प्रशासनिक घटनाक्रम **5**

- न्यायिक अवमानना का औचित्य 5
- दिल्ली क्षेत्राधिकार विवाद 8
- आपराधिक न्याय प्रणाली में सुधार: प्रासंगिकता व महत्त्व 10
- पीएम-केयर्स फंड: आवश्यकता व महत्त्व 12
- नेशनल रिक्रूटमेंट एजेंसी: आवश्यकता और महत्त्व 15

आर्थिक घटनाक्रम **18**

- खाद्य असुरक्षा: समस्या और समाधान 18
- राजकोषीय परिषद: आवश्यकता व महत्त्व 21
- कृषि बाज़ार सुधारों को सफल बनाने की आवश्यकता 23
- व्यापार सुगमता रिपोर्ट: प्रमाणिकता पर प्रश्नचिन्ह 25

अंतर्राष्ट्रीय घटनाक्रम **29**

- इज़राइल-यूएई समझौता: कारण और प्रभाव 29

पर्यावरण एव पारिस्थितिकी **32**

- अपशिष्ट प्रबंधन: पाँच सूत्रीय कार्य-योजना की आवश्यकता 32

दृष्टि The Vision

नोट :

सामाजिक न्याय **36**

➢ सार्वभौमिक विवाह योग्य आयु का निर्धारण 36

आंतरिक सुरक्षा **39**

➢ इस्लामिक स्टेट का पुर्नउभार 39

दृष्टि The Vision

नोट :

नोट :

संवैधानिक/प्रशासनिक घटनाक्रम

न्यायिक अवमानना का औचित्य

संदर्भ

हाल ही में न्यायिक अवमानना के मामले में वरिष्ठ वकील प्रशांत भूषण को सर्वोच्च न्यायालय ने दोषी करार दिया है। सर्वोच्च न्यायालय ने ट्वीट (tweet) से संबंधित विषय में स्वत: संज्ञान (Suo Motu) लेते हुए वरिष्ठ वकील प्रशांत भूषण को न्यायालय की अवमानना का दोषी माना है। सर्वोच्च न्यायालय 20 अगस्त 2020 को अवमानना के मुद्दे पर दी जाने वाली सज़ा पर सुनवाई करेगा। न्यायाधीश अरुण मिश्र की अध्यक्षता वाली सर्वोच्च न्यायालय की तीन न्यायाधीशों की इस पीठ ने कहा कि यह अवमानना का गंभीर मामला है। इस पीठ में न्यायाधीश अरुण मिश्र के अलावा न्यायाधीश बी.आर.गावी और न्यायाधीश कृष्णा मुरारी भी शामिल थे।

दरअसल यह मामला वरिष्ठ अधिवक्ता प्रशांत भूषण के द्वारा किये गए ट्वीट (tweet) से संबंधित है, जिसमें उन्होंने सोशल मीडिया साइट्स ट्विटर पर पोस्ट किये गये कथित अवमाननाकारक ट्वीट में सर्वोच्च न्यायालय की आलोचना की थी। प्रशांत भूषण ने वैश्विक महामारी COVID-19 के दौरान दूसरे राज्यों से पलायन कर रहे कामगारों के मामले में सर्वोच्च न्यायालय के रवैये की तीखी आलोचना की थी। इस आलेख में न्यायिक अवमानना, उसके प्रकार, न्यायालय की अवमानना के लिये दंड के प्रावधान, अवमानना अधिनियम की आवश्यकता तथा अवमानना अधिनियम में संशोधन संबंधी विधि आयोग की सिफारिशों पर चर्चा की जाएगी।

न्यायिक अवमानना से तात्पर्य

- न्यायिक अवमानना अधिनियम, 1971 (Contempt of Court Act, 1971) के अनुसार, न्यायालय की अवमानना का अर्थ किसी न्यायालय की गरिमा तथा उसके अधिकारों के प्रति अनादर प्रदर्शित करना है।
- न्यायिक आदेशों की अवहेलना करना, उनका पालन न सुनिश्चित करना इत्यादि न्यायिक अवमानना के दायरे में आता है।

न्यायिक अवमानना की अवधारणा

- 'न्यायालय की अवमानना' संबंधी अवधारणा का अस्तित्व इंग्लैंड में कई सदियों से है। इंग्लैंड में इसे एक सामान्य कानूनी सिद्धांत के रूप में मान्यता प्राप्त है जिसका उद्देश्य राजा की 'न्यायिक शक्तियों' की रक्षा करना है।
- शुरुआत में राजा स्वयं अपनी न्यायिक शक्तियों का प्रयोग करता था परंतु बाद में इन शक्तियों का प्रयोग 'न्यायाधीशों के एक पैनल' जो राजा के नाम पर कार्रवाई कार्य करता है, द्वारा किया जाने लगा। न्यायाधीशों के आदेशों के उल्लंघन को स्वयं राजा के अपमान के रूप में देखा जाता था।
- समय के साथ न्यायाधीशों की किसी भी तरह की अवज्ञा, या उनके निर्देशों के कार्यान्वयन में बाधा उत्पन्न करना, या ऐसी कोई टिप्पणी या कार्य करना जो उनके प्रति अनादर दिखाते थे, दंडनीय माने जाने लगे।
- भारत में न्यायिक अवमानना के कानून स्वतंत्रता से पहले से ही विद्यमान थे। प्रारंभिक उच्च न्यायालयों के अलावा कुछ रियासतों के न्यायालयों में ऐसे कानून विद्यमान थे।

न्यायिक अवमानना के प्रकार

- न्यायिक अवमानना अधिनियम, 1971 की धारा 2 (A) के तहत अवमानना को 'सिविल' और 'आपराधिक' अवमानना में बाँटा गया है।
  - सिविल अवमानना: न्यायिक अवमानना अधिनियम, 1971 की धारा 2 (B) के अंतर्गत न्यायालय के किसी निर्णय, डिक्री, आदेश, रिट, अथवा अन्य किसी प्रक्रिया की जान बूझकर की गई अवज्ञा या उल्लंघन करना न्यायालय की सिविल अवमानना कहलाता है।
  - आपराधिक अवमानना: न्यायिक अवमानना अधिनियम, 1971 की धारा 2 (C) के अंतर्गत न्यायालय की आपराधिक अवमानना का अर्थ न्यायालय से जुड़ी किसी ऐसी बात के प्रकाशन से है, जो लिखित, मौखिक, चिह्नित , चित्रित या किसी अन्य तरीके से न्यायालय की अवमानना करती हो।

नोट :

न्यायिक अवमानना अधिनियम, 1971

- यह अधिनियम न्यायालयों के किसी निर्णय, डिक्री, आदेश, रिट आदि की अवहेलना करने पर दंड देने की शक्ति को परिभाषित करता है।
- यह अधिनियम न्यायालयों को किसी भी निर्णय, रिट, निर्देश या आदेश की अवमानना करने या जानबूझकर अवज्ञा करने पर व्यक्तिगत स्वतंत्रता के मौलिक अधिकार को प्रतिबंधित करने की शक्ति प्रदान करता है।
- अधिनियम के तहत न्यायाधीशों पर भी न्यायिक अवमानना का केस दर्ज किया जा सकता है। उदाहरण के लिये सर्वोच्च न्यायालय की अवमानना पर न्यायाधीश सी.एस. कर्णन को छह माह कारावास का दंड मिला था।

न्यायिक अवमानना (संशोधन) अधिनियम, 2006

- न्यायिक अवमानना अधिनियम, 1971 की धारा 13 के तहत सत्य (Truth) और सुविश्वास (Good Faith) जैसे प्रावधानों को शामिल करने के लिये न्यायिक अवमानना (संशोधन) अधिनियम, 2006 को लाया गया था।
- न्यायिक अवमानना की कार्रवाई के दौरान सार्वजनिक हित को ध्यान में रखते हुए सत्य व सुविश्वास के आधार पर व्यक्ति अपने बचाव के संदर्भ में न्यायालय के समक्ष तर्क प्रस्तुत कर सकता है न्यायिक अवमानना अधिनियम के उद्देश्य
- न्यायिक अवमानना अधिनियम, 1971 का उद्देश्य न्यायालय की गरिमा और महत्त्व को बनाए रखना है।
- अवमानना से जुड़ी हुई शक्तियाँ न्यायाधीशों को भय, पक्षपात और की भावना के बिना कर्तव्यों का निर्वहन करने में सहायता करती हैं।
- न्यायिक अवमानना की यह शक्ति विधि के समक्ष समता को लागू करती है तथा न्यायालय के आदेशों का बलपूर्वक अनुपालन करवाने हेतु, समृद्ध और शक्तिशाली व्यक्तियों के विरुद्ध एक उपकरण के रूप में कार्य करती है।
- न्यायिक अवमानना की शक्ति न्यायपालिका की विश्वसनीयता और दक्षता को बनाए रखने में सहायक होती है।

न्यायिक अवमानना अधिनियम के संवैधानिक प्रावधान

- सर्वोच्च न्यायालय को न्यायिक अवमानना की शक्तियाँ भारत के संविधान के विभिन्न प्रावधानों, अर्थात् अनुच्छेद 129, 142 (2) और 215 से प्राप्त होती हैं।
  - अनुच्छेद 129: उच्चतम न्यायालय अभिलेख न्यायालय होगा और उसको अवमानना के लिये दंड देने की शक्ति होगी।
  - अनुच्छेद 142 (2): यह अनुच्छेद अवमानना के आरोप में किसी भी व्यक्ति की जाँच तथा उसे दंडित करने के लिये सर्वोच्च न्यायालय को सक्षम बनाता है।
  - अनुच्छेद 215: प्रत्येक राज्य के उच्च न्यायालय को अभिलेख न्यायालय के रूप में स्वीकार किया गया है। उच्च न्यायालयों को स्वंय की अवमानना के लिये दंडित करने में सक्षम बनाता है।

न्यायिक अवमानना में शामिल तत्व

- संपूर्ण न्यायपालिका या अलग-अलग न्यायाधीशों के खिलाफ आरोप लगाना;
- न्यायालय के निर्णयों और न्यायिक कार्यों में बाधा उत्पन्न करना;
- न्यायाधीशों के आचरण पर किसी भी तरह के अपमान जनक हमले करना।

न्यायिक अवमानना में शामिल नहीं है

- न्यायिक कार्यवाही की निष्पक्ष और सटीक रिपोर्टिंग में न्यायालय की अवमानना नहीं होगी।
- किसी मामले की सुनवाई और निपटान के बाद न्यायिक आदेश की युक्तिसंगत निष्पक्ष आलोचना करना।

न्यायिक अवमानना पर दंड

- सर्वोच्च न्यायालय तथा उच्च न्यायालय को न्यायालय की अवमानना के लिये दंडित करने की शक्ति प्राप्त है। यह दंड छह महीने का साधारण कारावास या 2000 रूपए तक का जुर्माना या दोनों एक साथ हो सकता है।
- वर्ष 1991 में सर्वोच्च न्यायालय ने यह निर्णय सुनाया कि उसके पास न केवल खुद की बल्कि पूरे देश में उच्च न्यायालयों, अधीनस्थ न्यायालयों तथा न्यायाधिकरणों की अवमानना के मामले में भी दंडित करने की शक्ति है।

नोट :

- उच्च न्यायालयों को न्यायालय की अवमानना अधिनियम, 1971 की धारा 10 के अंतर्गत अधीनस्थ न्यायालयों की अवमानना के लिये दंडित करने का विशेष अधिकार प्रदान किया है।

न्यायिक अवमानना बनाम अभिव्यक्ति की आजादी

- संविधान का अनुच्छेद-19 भारत के प्रत्येक नागरिक को वाक् एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता प्रदान करता है परंतु न्यायिक अवमानना अधिनियम, 1971 द्वारा न्यायालय की कार्यप्रणाली के खिलाफ बात करने पर अंकुश लगा दिया है।
- कानून बहुत व्यक्तिपरक है, अत: अवमानना के दंड का उपयोग न्यायालय द्वारा अपनी आलोचना करने वाले व्यक्ति की आवाज़ को दबाने के लिये किया जा सकता है।

अन्य चिंताएँ

- अवमानना अधिनियम न्यायपालिका के लिये हितों के टकराव की स्थिति को उत्पन्न करता है क्योंकि न्यायाधीश स्वयं ही पीड़ित होते हैं और वे स्वयं ही न्यायकर्त्ता की भूमिका में भी रहते हैं।
- अवमानना अधिनियम लोकतांत्रिक लोकाचार के विरुद्ध है क्योंकि एक स्वस्थ्य लोकतंत्र में रचनात्मक आलोचना का अति महत्त्व होता है जबकि यह कानून न्यायपालिका की आलोचना करने पर प्रतिबंध लगाता है।
- न्यायिक अवमानना अधिनियम में व्यक्ति की रक्षापायों के संबंध में प्रावधान का अभाव है, जो प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत के विरुद्ध है।
- भारत में न्यायिक अवमानना अधिनियम वर्तमान में भी प्रचलन में है जबकि ब्रिटेन में इसे काफी पहले ही समाप्त कर दिया गया है।

न्यायिक अवमानना के उदाहरण

- हीरालाल दीक्षित बनाम उत्तर प्रदेश राज्य 1954: न्याय के प्रशासन में वास्तविक बाधा या रुकावट एक आवश्यक शर्त नहीं है, ऐसा कोई भी कार्य जो अपमान जनक हो सकता है और जिसके परिणामस्वरूप न्यायालय की गरिमा को ठेस पहुँचती है, न्यायिक अवमानना हो सकती है।
- के. दफ्तरी बनाम ओ.पी गुप्ता वाद 1971: कोई भी कार्य जो आम जनता के मन में न्यायपालिका के विश्वास को कम करता है या न्याय के प्रशासन में बाधा उत्पन्न कर रहा है या सर्वोच्च न्यायालय या सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की प्रतिष्ठा को प्रभावित करता है तो ऐसी स्थिति में अनुच्छेद 129 व अनुच्छेद 142 एक साथ पढ़ा जाएगा और इसे न्यायिक अवमानना का कृत्य माना जाएगा।

विधि आयोग का मंतव्य

- विधि आयोग की 274वीं रिपोर्ट में सिफारिश की गई कि न्यायिक अवमानना अधिनियम में किसी भी प्रकार के संशोधन की आवश्यकता नहीं है और इसके निम्नलिखित कारण हैं-
    - अवमानना के अत्यधिक मामले: आयोग ने कहा है कि सर्वोच्च न्यायालय और सभी उच्च न्यायालयों में सिविल (96,993) और आपराधिक अवमानना (583) के बहुत से मामले लंबित पड़े हैं। इतनी बड़ी संख्या में ऐसे मामलों की मौजूदगी से साबित होता है कि कानून की प्रासंगिकता बनी हुई है।
    - अवमानना से जुड़ी शक्ति का स्रोत: आयोग ने कहा है कि सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालय को अवमानना से जुड़ी शक्तियाँ संविधान से मिली हुई हैं। अधिनियम सिर्फ अवमानना की जाँच और दंड के संबंध में न्यायिक प्रक्रिया को रेखांकित करता है। इसलिये अधिनियम के संशोधन या उसे समाप्त करने की आवश्यकता नहीं है।
    - अधीनस्थ न्यायालयों पर नकारात्मक प्रभाव: संविधान सर्वोच्च न्यायालय को उनकी अवमानना करने पर दंड देने की अनुमति देता है। इसके अतिरिक्त अधिनियम उच्च न्यायालयों को इस बात की अनुमति देता है कि वे अधीनस्थ न्यायालयों की अवमानना करने पर किसी को दंड दे सकते हैं। आयोग का मत है कि यदि अवमानना की परिभाषा को सीमित किया जाएगा, तो अधीनस्थ न्यायालय प्रभावित होंगे, चूँकि उनके पास अपनी अवमानना के मामलों से निपटने का कोई उपाय नहीं है।
    - अस्पष्टता: आयोग का विचार है कि अवमानना की परिभाषा में संशोधन करने से अस्पष्टता आएगी। इसका परिणाम यह होगा कि सर्वोच्च न्यायालय संविधान के अंतर्गत प्राप्त अवमानना संबंधी शक्तियों का प्रयोग करते रहेंगे। अगर अधिनियम में आपराधिक अवमानना की कोई परिभाषा नहीं रहेगी, तो सर्वोच्च न्यायालय अवमानना की अनेक परिभाषाएँ और स्पष्टीकरण दे सकते हैं। आयोग ने सुझाव दिया कि स्पष्टता सुनिश्चित करने के लिये परिभाषा को बरकरार रखा जाए।

- पर्याप्त रक्षोपाय: आयोग ने बताया है कि अधिनियम का दुरुपयोग रोकने के लिये अनेक रक्षोपाय किये गए हैं। उदाहरण के लिये अधिनियम के कई प्रावधानों में ऐसे मामले पेश किये गए हैं जिन्हें अवमानना नहीं माना गया है।

निष्कर्ष:

न्यायपालिका को दो परस्पर विरोधी सिद्धांतों अर्थात् अनुच्छेद 19(1)(a) के तहत वाक् एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता तथा और न्यायालय की अवमानना की शक्ति को संतुलित करने की दिशा में प्रयास करना चाहिये।

दिल्ली क्षेत्राधिकार विवाद

संदर्भ

हाल ही में दिल्ली सरकार ने इस वर्ष फरवरी माह में राज्य में हुई सांप्रदायिक हिंसा से जुड़े मामले में लोक अभियोजकों (Public Prosecutors) को नियुक्त करने संबंधी दिल्ली पुलिस के प्रस्ताव को खारिज कर दिया था। दिल्ली सरकार ने गृह विभाग को उच्च न्यायालय और उच्चतम न्यायालय में, सांप्रदायिक हिंसा से जुड़े मामलों की सुनवाई के लिये देश के सर्वश्रेष्ठ वकीलों का एक पैनल बनाने का निर्देश दिया है। दिल्ली सरकार का मानना था कि सांप्रदायिक हिंसा के मामले में दिल्ली पुलिस की जाँच को न्यायालय ने निष्पक्ष नहीं पाया है, इसलिये दिल्ली पुलिस के पैनल को मंजूरी दी गयी तो मामलों की निष्पक्ष सुनवाई नहीं हो पाएगी।

तदुपरांत उपराज्यपाल ने दिल्ली सरकार द्वारा भेजे गए प्रस्ताव पर असहमति जताई और संविधान के अनुच्छेद 239 AA के परंतुक (4) के अनुसार, अपनी विशेष शक्तियों का प्रयोग करते हुए इस विषय को राष्ट्रपति के विचारार्थ आरक्षित कर दिया और स्वयं ही लोक अभियोजकों की नियुक्ति कर दी। उपराज्यपाल के इस कार्य से दिल्ली सरकार के साथ टकराव बढ़ने की संभावना व्यक्त की गई है इस आलेख में दिल्ली की संवैधानिक स्थिति, संविधान के अनुच्छेद-239AA की व्याख्या, केंद्र सरकार का पक्ष, दिल्ली सरकार का पक्ष तथा सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय के संबंध में विचार-विमर्श किया जाएगा।

दिल्ली की संवैधानिक स्थिति

- बाल कृष्ण समिति ने सुझाव दिया था कि दिल्ली को संघ राज्य क्षेत्र ही बनाए रखा जाना चाहिये, किंतु उसके लिये एक विधानसभा और मंत्रिपरिषद् की व्यवस्था की जानी चाहिये।
- समिति की सिफारिशों के आधार पर संसद ने 69वें संविधान संशोधन अधिनियम, 1991 के माध्यम से संविधान में अनुच्छेद-239 AA तथा 239 AB शामिल करके इसमें दिल्ली से संबंधित नए प्रावधान किये।
- संसद ने अनुच्छेद-239 AA के प्रवधानों का अनुसरण करते हुए दिल्ली राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र अधिनियम, 1991 पारित किया। इसी अधिनियम तथा अनुच्छेद-239 AA, 239 AB तथा अनुच्छेद-239 B में निर्दिष्ट प्रावधानों के अनुसार वर्तमान में दिल्ली का प्रशासन चलाया जाता है।

क्या कहता है अनुच्छेद 239AA ?

- सर्वोच्च न्यायालय के पाँच न्यायाधीशों की संवैधानिक पीठ ने संविधान के अनुच्छेद-239AA की व्याख्या की थी, जिसमें उसने कहा था कि दिल्ली में उपराज्यपाल दिल्ली सरकार की मंत्री परिषद की सलाह से काम करेंगे, यदि कोई अपवाद है तो वह मामले को राष्ट्रपति के विचारार्थ आरक्षित कर सकते हैं, परंतु यह अपवाद दुर्लभतम श्रेणी का होना चाहिये।

क्षेत्राधिकार संबंधी विवाद में केंद्र सरकार का पक्ष

- राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली ऐसी विशिष्टताओं से युक्त है कि इस पर केंद्र सरकार का प्रभावी नियंत्रण आवश्यक है और 69वाँ संविधान संशोधन इस बात की पुष्टि करता है।
- दिल्ली के उपराज्यपाल की शक्ति अन्य राज्यों के राज्यपाल के अधिकार से अलग है।
- संविधान के तहत दिल्ली के उपराज्यपाल को विशेषाधिकार मिला हुआ है।
- विधानसभा होने का यह अर्थ नहीं है कि दिल्ली एक राज्य है और उसे अन्य राज्यों की तरह अधिकार प्राप्त हैं।
- दिल्ली पूर्णतया केंद्र द्वारा शासित प्रदेश है और अंतिम अधिकार केंद्र के जरिये राष्ट्रपति के पास है।

- अनुच्छेद-239 AA (4) में प्रयुक्त भाषा उपराज्यपाल और उसकी मंत्रिपरिषद, पर गौर करने पर स्पष्ट होता है कि दिल्ली के प्रशासन की प्राथमिक ज़िम्मेदारी उपराज्यपाल को दी गयी है।

दिल्ली सरकार का पक्ष

- दिल्ली की विशिष्ट स्थिति पर गौर करे तो यहाँ जिस वेस्टमिन्सटर पद्धति को अपनाया गया है उसमें चुनी हुई सरकार ही सर्वोपरि होती है। यही व्यवस्था पूरे देश में है। इसे देखते हुए दिल्ली में एक निर्वाचित सरकार के ऊपर मनोनीत सरकार को
- वरीयता कैसे दी जा सकती है? यह संवैधानिक मूल्यों के विपरीत होगा।
- उपराज्यपाल को मंत्रिमंडल की सलाह पर काम करना चाहिये।
- संविधान के अनुच्छेद 239AA के तहत चुनी हुई सरकार होती है, जो जनता के प्रति जवाबदेह होती है।
- ज़मीन, सार्वजनिक व्यवस्था और पुलिस के अलावा राज्य और समवर्ती सूची में शामिल मामलों में दिल्ली विधानसभा को कानून बनाने का अधिकार है।
- संवैधानिक प्रावधानों पर गौर करने पर पाते है कि यह राज्यपाल को भी सीमित शक्ति प्रदान करती है। क्योंकि 239 कक के द्वारा Assist and Advice को बदलकर Aid and Advice कर दिया गया गया। इसलिये उपराज्यपाल द्वारा हर मामले को अपने पास अनुमति के लिये मांगना असंवैधानिक है।

विवाद पर सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय

- अनुच्छेद-239 AA (3) यह प्रावधान करता है कि दिल्ली विधानसभा पुलिस, भूमि और लोक व्यवस्था छोड़कर राज्य सूची और समवर्ती सूची के विषयों पर कानून बना सकती है।
- वर्ष 2018 में सर्वोच्च न्यायालय की संविधान पीठ ने उपराज्यपाल और दिल्ली सरकार के बीच सत्ता की सीमाओं को चित्रित करते हुए कहा कि उपराज्यपाल भूमि, पुलिस और पब्लिक आर्डर के मामलों को छोड़कर दिल्ली सरकार के निर्णय में हस्तक्षेप नहीं कर सकते और मंत्रिपरिषद की "सहायता और सलाह" उन पर बाध्यकारी है।
- सर्वोच्च न्यायालय ने दिल्ली उच्च न्यायालय के निर्णय को पलटते हुए कहा कि उपराज्यपाल को कोई भी स्वतंत्र निर्णय लेने की शक्ति नहीं है। उन्हें या तो मंत्रिपरिषद की 'सहायता और सलाह' पर कार्य करना होगा या उनके द्वारा राष्ट्रपति को संदर्भित किसी मामले पर राष्ट्रपति द्वारा लिये गए निर्णय को लागू करना होगा।
- संविधान पीठ ने अपनी अलग किंतु समेकित राय में लेफ्टिनेंट-गवर्नर को सरकार के साथ "सामान्य" विवाद को राष्ट्रपति के पास भेजने के खिलाफ चेतावनी भी दी।
- न्यायालय ने कहा, उप-राज्यपाल को सरकार के साथ सौहार्द्रपूर्ण तरीके से काम करना चाहिये। निर्णय में इस बात पर भी ज़ोर दिया गया कि उप-राज्यपाल यांत्रिक रूप से सभी मामले स्व-विवेक के बिना राष्ट्रपति को संदर्भित नहीं कर सकते हैं।
- निर्णय लेने का वास्तविक अधिकार निर्वाचित सरकार के पास है क्योंकि वह जनता के प्रति जवाबदेह है। उप-राज्यपाल को निर्वाचित सरकार की सहायता और सलाह के अनुसार कार्य करना चाहिये।

लोक अभियोजकों की नियुक्ति के संबंध में सरकार का पक्ष

- दिल्ली सरकार का मानना है कि किसी भी आपराधिक न्याय प्रणाली का मूल सिद्धांत यह है कि जाँच पूरी तरह से स्वतंत्र होनी चाहिये और जाँच को न्यायिक प्रक्रिया के बाकी हिस्सों में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिये।
- इस सिद्धांत को ध्यान में रखते हुए दिल्ली सरकार का मानना है कि आपराधिक प्रक्रिया संहिता की धारा-24 में यह भी उल्लिखित है कि दिल्ली सरकार को सरकारी वकील नियुक्त करने का अधिकार है।
- संविधान के तहत उपराज्यपाल के पास दिल्ली की निर्वाचित सरकार के निर्णय में हस्तक्षेप करने की विशेष शक्तियाँ हैं, परंतु सर्वोच्च न्यायालय ने कहा है कि उपराज्यपाल दुर्लभतम मामलों में ही इस अधिकार का प्रयोग कर सकते हैं। अन्यथा, यह लोकतंत्र की भावना के विरुद्ध है। लोक अभियोजकों के पैनल की नियुक्ति किसी भी दुर्लभ श्रेणी में नहीं आती है और यह एक सामान्य प्रक्रिया है। इस कारण से दिल्ली सरकार लोक अभियोजकों को नियुक्त करने के लिये पूरी तरह से आश्वस्त है।

क्या उपराज्यपाल प्रशासकीय मामलों को राष्ट्रपति के समक्ष संदर्भित कर सकते हैं ?

- वर्ष 2018 में दिये गए सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय को ध्यानपूर्वक पढने से यह पता चलता है कि संविधान के तहत उपराज्यपाल के पास दिल्ली की निर्वाचित सरकार के निर्णय को राष्ट्रपति के विचारार्थ आरक्षित करने की विशेष शक्तियाँ हैं, परंतु
- उपराज्यपाल दुर्लभतम मामलों में ही इस अधिकार का प्रयोग कर सकते हैं।
- सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय के अनुसार, उपराज्यपाल अनुच्छेद 239 AA के परंतुक (4) के अंतर्गत अपवाद स्वरुप 'किसी मामले (Any Matter)' के संबंध में ही राष्ट्रपति के विचारार्थ आरक्षित कर सकता है न कि 'प्रत्येक मामले (Every Matter)' में।
- सर्वोच्च न्यायालय का यह भी मानना था कि उपराज्यपाल को इस शक्ति का प्रयोग सामान्य नियम की भांति न कर अपवादस्वरूप ही करना चाहिये।
- राष्ट्रपति सर्वोच्च संवैधानिक प्राधिकारी हैं और उनके निर्णय को संवैधानिक रूप से महत्त्वपूर्ण मुद्दों पर ही मांगा जाना चाहिये।

आगे की राह

- दिल्ली सरकार व उपराज्यपाल को सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय के अधीन रहते हुए अपने दायित्वों का निर्वहन करना चाहिये।
- सहकारी संघवाद की भावना को मज़बूत करने के लिये सरकार व उपराज्यपाल को संयुक्त रूप से कार्य करने की दिशा में आगे आना होगा।

आपराधिक न्याय प्रणाली में सुधारः प्रासंगिकता व महत्त्व

संदर्भ

हाल ही में केंद्रीय गृह मंत्रालय (Ministry of Home Affairs) ने आपराधिक कानून में सुधार के लिये एक राष्ट्रीय स्तर की समिति का गठन किया है। आपराधिक कानून में सुधार के लिये गठित की गई राष्ट्रीय स्तर की समिति में दिल्ली की 'नेशनल लॉ यूनिवर्सिटी' के कुलपति रणबीर सिंह सहित न्यायिक क्षेत्र के विशेषज्ञों को शामिल किया गया है। यह समिति विशेषज्ञों के साथ परामर्श करके अपनी रिपोर्ट के लिये ऑनलाइन सुझाव एकत्रित करेगी। केंद्रीय गृह मंत्रालय द्वारा पाँच सदस्यीय समिति के गठन का निर्णय देश की आपराधिक न्याय प्रणाली (Criminal Justice System) में सुधार लाने का एक प्रयास है।

गौरतलब है कि दिसंबर 2019 में संसद में भीड़ हत्या (Mob Lynching) जैसी घटनाओं के लिये अलग कानून की मांग पर केंद्रीय गृह मंत्री ने जानकारी दी थी कि सरकार ऐसे मामलों को लेकर भारतीय दंड संहिता और आपराधिक प्रक्रिया संहिता में आवश्यक परिवर्तन पर विचार कर रही है। इस आलेख में आपराधिक न्याय प्रणाली का अर्थ, उसकी पृष्ठभूमि, आपराधिक न्याय प्रणाली में सुधार के पूर्व प्रयास, समिति के उद्देश्य, माँगे गए सुझाव, लाभ तथा चुनौतियों पर विमर्श करने का प्रयास किया जाएगा।

आपराधिक न्याय प्रणाली से तात्पर्य

- आपराधिक न्याय प्रणाली का तात्पर्य सरकार की उन एजेंसियों से है जो कानून लागू करने, आपराधिक मामलों पर निर्णय देने और आपराधिक आचरण में सुधार करने हेतु कार्यरत हैं।
- वास्तव में आपराधिक न्याय प्रणाली सामाजिक नियंत्रण का एक साधन होती है, क्योंकि समाज कुछ व्यवहारों को इतना खतरनाक और विनाशकारी मानता है कि वह उन्हें नियंत्रित करने का भरपूर प्रयास करता है।

आपराधिक न्याय प्रणाली की पृष्ठभूमि

- भारत में आपराधिक कानूनों का संहिताकरण (Codification) ब्रिटिश शासन के दौरान किया गया था जो कमोबेश 21वीं सदी में भी उसी तरह ही है।
- लॉर्ड थॉमस बबिंगटन मैकाले (Lord Thomas Babington Macaulay) को भारत में आपराधिक कानूनों के संहिताकरण का मुख्य वास्तुकार कहा जाता है।
    - वर्ष 1834 में स्थापित भारत के पहले विधि आयोग की सिफारिशों पर चार्टर एक्ट-1833 के तहत वर्ष 1860 में आपराधिक कानूनों के संहिताकरण के लिये मसौदा तैयार किया गया था। और इसे वर्ष 1862 के शुरुआती ब्रिटिश काल के दौरान ब्रिटिश भारत में लागू किया गया।

- भारत में आपराधिक कानून भारतीय दंड संहिता, 1860 (Indian Penal Code, 1860), आपराधिक प्रक्रिया संहिता, 1973 (Code of Criminal Procedure, 1973) और भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 (Indian Evidence Act, 1872) आदि के तहत संचालित होते हैं।

आपराधिक कानूनों में सुधार के पूर्व प्रयास

- मलिमथ समिति (वर्ष 2003): मलिमथ समिति ने अपनी रिपोर्ट में भारतीय आपराधिक न्याय प्रणाली से जुड़े लगभग 150 से अधिक सुधारों के सुझाव दिये थे।
- माधव मेनन समिति (वर्ष 2007): माधव मेनन समिति ने वर्ष 2007 में प्रस्तुत अपनी रिपोर्ट में कई अपराधों को परिभाषित करने के साथ-साथ पीड़ितों को अधिकार देने के उद्देश्य से कुछ अपराधों को वर्गीकृत करते हुए चार अलग-अलग संहिताओं में बाँटने का सुझाव दिया। इसके अतिरिक्त समिति ने दांडिक न्याय सुधार हेतु विज्ञान और प्रौद्योगिकी का उपयोग को बढ़ावा देने तथा पीड़ितों को मुआवज़ा दिलाए जाने का सुझाव दिया।
- न्यायमूर्ति जे. एस. वर्मा समिति (वर्ष 2013): वर्ष 2012 के निर्भया मामले के बाद बनी जस्टिस वर्मा समिति की रिपोर्ट के आधार पर 'आपराधिक कानून (संशोधन) विधेयक, 2013' लाया गया।
- विधि आयोग (Law Commission): इसी प्रकार विधि आयोग भी समय-समय पर आपराधिक कानूनों में सुधार के लिये अपनी रिपोर्ट देता रहा है।

सुधार की आवश्यकता क्यों?

- औपनिवेशिक काल के आपराधिक कानून: आपराधिक न्याय प्रणाली ब्रिटिश औपनिवेशिक न्यायशास्त्र की प्रतिकृति है जिसे राष्ट्र पर शासन करने के उद्देश्य से बनाया गया था न कि नागरिकों की सेवा करने के लिये।
- भाव-शून्यता: आपराधिक न्याय प्रणाली का उद्देश्य निर्दोषों के अधिकारों की रक्षा करना और दोषियों को दंडित करना था किंतु आजकल यह प्रणाली आम लोगों के उत्पीड़न का एक उपकरण बन गई है।
- विचाराधीन आपराधिक मामलों का बढ़ता बोझ: आर्थिक सर्वेक्षण 2018-19 के अनुसार, न्यायिक प्रणाली में (विशेष रूप से ज़िला एवं अधीनस्थ न्यायालयों में) लगभग 3.5 करोड़ मामले लंबित हैं।
- अंडरट्रायल मामलों की बढ़ती संख्या: भारत, दुनिया के सबसे अधिक अंडरट्रायल कैदियों की संख्या वाला देश है। वर्ष 2015 की एनसीआरबी-प्रिज़न स्टैटिस्टिक्स इंडिया (NCRB-Prison Statistics India) के अनुसार, जेल में बंद कुल जनसंख्या का 67.2 प्रतिशत अंडरट्रायल कैदी हैं।
- जाँच पड़ताल में देरी: भ्रष्टाचार, काम का बोझ और पुलिस की जवाबदेही न्याय की तेज़ और पारदर्शी न्याय देने में एक बड़ी बाधा है।

सुधार हेतु कुछ सुझाव

- संबंधों की सबसे स्पष्ट अभिव्यक्ति माना जाता है इसलिये भारत की आपराधिक न्याय प्रणाली में किसी भी संशोधन को कई सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए किया जाना चाहिये।
- अपराध पीड़ितों के अधिकारों की पहचान करने के लिये कानूनों में सुधार हेतु 'पीड़ित होने का कारण' पर खास तौर पर ज़ोर दिया जाना चाहिये। उदाहरण: पीड़ित एवं गवाह संरक्षण योजनाओं का शुभारंभ, अपराध पीड़ित बयानों का उपयोग, आपराधिक परीक्षणों में पीड़ितों की भागीदारी में वृद्धि, मुआवजे एवं पुनर्स्थापन हेतु पीड़ितों की पहुँच में वृद्धि।
- नए अपराधों के निर्माण और अपराधों के मौजूदा वर्गीकरण के पुनर्मूल्यांकन को आपराधिक न्यायशास्त्र के सिद्धांतों द्वारा निर्देशित किया जाना चाहिये जो पिछले चार दशकों में काफी बदल गए हैं।
    - उदाहरण: 'दंड की डिग्री' (Degree of Punishments) देने के लिये आपराधिक दायित्व को बेहतर तरीके से वर्गीकृत किया जा सकता है। नए प्रकार के दंड जैसे- सामुदायिक सेवा आदेश, पुनर्स्थापन आदेश तथा पुनर्स्थापना एवं सुधारवादी न्याय के अन्य पहलू भी इसकी तह में लाए जा सकते हैं

- अपराधों का वर्गीकरण भविष्य में होने वाले अपराधों के प्रबंधन के लिये अनुकूल तरीके से किया जाना चाहिये।
  - IPC के कई अध्यायों में दुहराव की स्थिति हैं। लोक सेवकों के खिलाफ अपराध, अधिकारियों की अवमानना, सार्वजनिक शांति और अतिचार पर अध्यायों को फिर से परिभाषित एवं संकुचित किया जा सकता है।
- किसी कार्य को एक अपराध के रूप में सूचीबद्ध करने से पहले पर्याप्त बहस के बाद ही मार्गदर्शक सिद्धांतों को विकसित किया जाना चाहिये।
  - असैद्धांतिक अपराधीकरण न केवल अवैज्ञानिक आधार पर नए अपराधों के निर्माण की ओर जाता है बल्कि आपराधिक न्याय प्रणाली में मनमानी भी करता है।
- एक ही तरह के अपराधों के लिये अलग-अलग तरीके से सजा का प्रावधान और सजा की प्रकृति को तय करने में न्यायाधीशों का विवेक 'न्यायिक पूर्वदाहरण' या 'न्यायिक मिसाल' (Judicial Precedent) के सिद्धांतों पर आधारित होना चाहिये।

लाभ

- इस प्रकार की समितियों के माध्यम से समय-समय पर न्यायिक प्रणाली में अपेक्षित सुधारों के माध्यम से न्यायालयों को अधिक प्रभावी बनाने में सहायता मिलेगी।
- समिति के संशोधनों के माध्यम से आपराधिक कानूनों में औपनिवेशिक काल की कमियों को दूर कर कानूनी प्रक्रिया को अधिक पारदर्शी बनाने में सहायता प्राप्त होगी।
- कानूनों के संदर्भ में बेहतर स्पष्टता होने से मामलों की सुनवाई में समय कम लगेगा और न्यायालयों पर लंबित मामलों की बढ़ती संख्या के दबाव को कुछ सीमा तक किया जा सकेगा।
- वर्तमान में इस समिति को दिये गए अधिकांश मुद्दों (जैसे-भीड़ द्वारा हत्या को हत्या की श्रेणी में रख कर न्याय हो सकता है) के संदर्भ में कानून पहले से उपलब्ध है, परंतु इनके लिये में नए कानूनों की मांग के विषय पर समिति की जाँच के माध्यम से इस विवाद का अंत किया जा सकेगा।

चुनौतियाँ

- समय-सीमा: समिति के कार्यों के अनुरूप इसे दी गई समय-सीमा बहुत ही कम है।
- समिति में विविधता की कमी: कई पूर्व न्यायधीशों और विधि क्षेत्र के विशेषज्ञों ने इस समिति में विविधता की कमी का आरोप लगाया है। उदाहरण के लिये इस समिति में किसी भी महिला सदस्य को शामिल नहीं किया गया है।
- अंशकालिक सदस्यता: इस समिति के सदस्य पूर्णकालिक नहीं हैं, अधिकांश इस समिति के सदस्य होने साथ अपनी पेशेवर प्रतिबद्धताएँ जारी रखे हुए हैं।
- वैश्विक महामारी: वर्तमान में COVID-19 महामारी के बीच समिति की गतिविधियाँ प्रभावित हो सकती हैं।

आगे की राह

- यदि समिति को अपने कार्यों के लिये अधिक समय की आवश्यकता पड़ती है तो इस समय सीमा को बढ़ाया जाना चाहिये।
- इस समिति के कार्य क्षेत्र की संवेदनशीलता को देखते हुए समाज के विभिन्न वर्गों के प्रतिनिधियों और विधि क्षेत्र से विशेषज्ञों को समिति में स्थान दिया जाना चाहिये।
- आपराधिक कानूनों में सुधार, मुख्य रूप से समाज में शांति लाने के लिये 'सुधारवादी न्याय' पर आधारित होना चाहिये।

पीएम-केयर्स फंड: आवश्यकता व महत्त्व

संदर्भ

हाल ही में सर्वोच्च न्यायालय ने पीएम-केयर्स फंड (PM-CARES Fund) की राशि को राष्ट्रीय आपदा प्रतिक्रिया कोष (NDRF) में हस्तांतरित करने संबंधी याचिका को खारिज करते हुए कहा है कि इन दोनों कोष की प्रकृति और उद्देश्य एक-दूसरे से सर्वथा भिन्न है, अत: इनके विलय की आवश्यकता नहीं है। सर्वोच्च न्यायालय ने यह भी कहा है कि भारत के नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक (Comptroller and Auditor General-CAG) से पीएम-केयर्स फंड का ऑडिट कराने की कोई आवश्यकता नहीं है, क्योंकि यह एक सार्वजनिक धर्मार्थ ट्रस्ट है।

ध्यातव्य है कि सेंटर फॉर पब्लिक इंटरेस्ट लिटिगेशन (CPIL) ने सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष याचिका दायर करते हुए मांग की थी कि न्यायालय सरकार को कोरोना वायरस (COVID-19) महामारी से निपटने के लिये राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन अधिनियम, 2005 के तहत एक नई राष्ट्रीय योजना बनाने का दिशा-निर्देश दे और पीएम-केयर्स फंड के तहत एकत्र की गई संपूर्ण राशि को राष्ट्रीय आपदा प्रतिक्रिया कोष के तहत हस्तांतरित कर दिया जाए। खंडपीठ ने निर्णय देते हुए कहा कि 'पीएम-केयर्स फंड में देश के सभी व्यक्तियों और संस्थानों द्वारा किये गए कुल योगदान को ट्रस्ट के उद्देश्य को पूरा करने हेतु सार्वजनिक प्रयोजन के लिये जारी किया जाना है और इस ट्रस्ट को कोई भी बजटीय सहायता या कोई सरकारी धन प्राप्त नहीं होता है, इसलिये याचिकाकर्त्ताओं द्वारा ट्रस्ट के निर्माण के उद्देश्य पर प्रश्नचिन्ह नहीं लगाया जा सकता है।

पीएम-केयर्स फंड क्या है?

- भारत मे कोरोना वायरस व अन्य स्वास्थ्य समस्याओं के फैलने से पैदा होने वाली स्थितियों से निपटने के लिये प्रधानमंत्री ने प्रधानमंत्री नागरिक सहायता एवं आपात स्थिति राहत कोष अर्थात् PM CARES नामक एक सार्वजनिक धर्मार्थ ट्रस्ट बनाया है। प्रधानमंत्री ने देश के नागरिकों और कॉरपोरेट घरानों से इस फंड में दान करने की अपील की और कहा कि इसमें जो पैसा आएगा, उससे कोरोना वायरस के खिलाफ चल रहे युद्ध को मज़बूती मिलेगी।
- प्रधानमंत्री इस ट्रस्ट के अध्यक्ष हैं और इसके सदस्यों में रक्षा मंत्री, गृह मंत्री एवं वित्त मंत्री को शामिल किया गया है।
- इस ट्रस्ट में विज्ञान, स्वास्थ्य, विधि और सार्वजनिक सेवा जैसे क्षेत्रों के विख्यात व्यक्तियों को बतौर मनोनीत सदस्य नियुक्त किया गया है।
- यह ट्रस्ट धन का आवंटन और लाभार्थियों के चयन का निर्णय ट्रस्ट के सदस्य व मनोनीत सदस्य के सामूहिक निर्णय के आधार पर करता है।
- इस ट्रस्ट में भी सरकार के बजट स्रोतों अथवा सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों के बैलेंस शीट्स से मिलने वाले अंशदान स्वीकार नहीं किये जाते हैं।
- कंपनियों द्वारा किया गया दान कंपनी अधिनियम,2013 के अधीन कॉर्पोरेट सामाजिक उत्तरदायित्व के अंतर्गत वर्गीकृत किये जाएँगे।

पीएम-केयर्स के संबंध में याचिकाकर्त्ता का तर्क

- याचिकाकर्त्ताओं ने सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष तर्क दिया कि सरकार द्वारा पीएम-केयर्स फंड बनाए जाने से राष्ट्रीय आपदा प्रतिक्रिया कोष को पूरी तरह से दरकिनार कर दिया गया है।
- याचिकाकर्त्ता ने कहा कि राष्ट्रीय आपदा प्रतिक्रिया कोष (NDRF) का ऑडिट नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक (CAG) द्वारा किया जाता है, जबकि पीएम-केयर्स फंड का ऑडिट CAG द्वारा नहीं बल्कि किसी निजी चार्टर्ड अकाउंटेंट (CA) द्वारा किया जाता है, जो कि इस फंड की पारदर्शिता पर प्रश्नचिन्ह खड़ा करता है।

राष्ट्रीय आपदा प्रतिक्रिया कोष

- राष्ट्रीय आपदा प्रतिक्रिया कोष (NDRF) का गठन आपदा प्रबंधन अधिनियम, 2005 की धारा 46 के तहत किया गया है।
- इसे किसी भी आपदा की स्थिति या आपदा के कारण आपातकालीन प्रतिक्रिया, राहत और पुनर्वास के खर्चों को पूरा करने के लिये केंद्र सरकार द्वारा प्रबंधित किया जाता है।
- यह गंभीर प्राकृतिक आपदा के मामले में राज्य आपदा प्रतिक्रिया कोष (SDRF) की सहायता करता है, बशर्ते SDRF में पर्याप्त धनराशि उपलब्ध न हो।
- ध्यातव्य है कि नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक (CAG) NDRF के खातों को ऑडिट करता है।

सर्वोच्च न्यायालय का निर्देश

- खंडपीठ ने कहा कि वर्ष 2019 की राष्ट्रीय योजना में महामारी (Epidemic) के सभी पहलुओं, जिसमें महामारी से निपटने संबंधी सभी उपाय और प्रतिक्रिया आदि, को विस्तृत रूप से प्रस्तुत किया गया है।
- ध्यातव्य है कि यह राष्ट्रीय योजना वर्ष 2016 में बनाई गई थी और नवंबर 2019 में इसे संशोधित तथा अनुमोदित किया गया था।
- इस लिहाज़ से याचिकाकर्त्ता का तर्क सही नहीं है कि देश में महामारी से निपटने के लिये कोई विस्तृत योजना मौजूद नहीं है।
- खंडपीठ ने कहा कि COVID-19 एक जैविक और सार्वजनिक स्वास्थ्य संबंधी महामारी है और राष्ट्रीय योजना 2019 में इसे विशेष रूप से कवर किया गया है, संबंधित राष्ट्रीय योजना में इस तहत की महामारी से निपटने के लिये विभिन्न प्रकार की योजनाएँ, दिशा-निर्देश और उपाय सुझाए गए हैं, इस प्रकार देश में COVID-19 से निपटने के लिये योजनाओं और प्रक्रियाओं की कोई कमी नहीं है।

पीएम-केयर्स फंड और सूचना का अधिकार

- हाल ही में प्रधानमंत्री कार्यकाल (PMO) ने पीएम-केयर्स फंड के संबंध में RTI अधिनियम के तहत दायर आवेदन में मांगी गई सूचना को अधिनियम की ही धारा 7(9) के तहत देने से इनकार कर दिया है।
- सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 की धारा 7(9) के अनुसार, 'किसी भी सूचना को साधारणतया उसी प्रारूप में उपलब्ध कराया जाएगा, जिसमें उसे मांगा गया है, जब तक कि वह लोक प्राधिकारी के स्रोतों को विषमतापूर्वक प्रभावित न करता हो या प्रश्नगत अभिलेख की सुरक्षा या संरक्षण के प्रतिकूल न हो।
- कई विशेषज्ञों ने प्रधानमंत्री कार्यालय (PMO) के इस कदम को RTI अधिनियम की धारा 7(9) के अनुचित उपयोग के रूप में परिभाषित किया है।
- ध्यातव्य है कि 2010 में केरल उच्च न्यायालय के निर्णय के अनुसार, धारा 7 (9) किसी भी सार्वजनिक प्राधिकरण को सूचना का खुलासा करने से छूट नहीं देती है, बल्कि यह किसी अन्य प्रारूप में सूचना प्रदान करने को अनिवार्य करता है।
- इससे पूर्व भी प्रधानमंत्री कार्यकाल (PMO) ने पीएम-केयर्स फंड को लेकर दायर किये गए तमाम आवेदनों में भी इसके संबंध में सूचना देने से इनकार कर दिया था, इससे पूर्व PMO ने एक आवेदन के जवाब में कहा था कि पीएम-केयर्स फंड सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 के तहत एक 'सार्वजनिक प्राधिकरण' (Public Authority) नहीं है।

आलोचना के बिंदु

- भारत में ट्रस्ट, भारतीय न्यास अधिनियम, 1882 के तहत काम करते हैं। किसी भी धर्मार्थ ट्रस्ट के लिये यह आवश्यक होता है कि उसकी एक ट्रस्ट डीड (न्यास विलेख) बने जिसमें इस बात का स्पष्ट जिक्र होता है कि वह किन उद्देश्यों के लिये बना है, उसकी संरचना क्या होगी और वह कौन-कौन से काम किस ढंग से करेगा? फिर इसका पंजीकरण सब रजिस्ट्रार के कार्यालय में कराना होता है।
- यह भी एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न है कि यदि देश में पहले से ही प्रधानमंत्री राष्ट्रीय राहत कोष (Prime Minister's National Relief Fund) मौजूद है तो फिर एक अन्य फंड का गठन क्यों किया गया है?

प्रधानमंत्री राष्ट्रीय राहत कोष

- पाकिस्तान से आए विस्थापित लोगों की मदद करने के उद्देश्य से जनवरी, 1948 में तत्कालीन प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू की अपील पर जनता द्वारा दिये गए अंशदान से प्रधानमंत्री राष्ट्रीय राहत कोष की स्थापना की गई थी।
- प्रधानमंत्री, प्रधानमंत्री राष्ट्रीय राहत कोष के अध्यक्ष हैं तथा अन्य अधिकारी/कर्मचारी अवैतनिक आधार पर इसके संचालन में उनकी सहायता करते हैं।
- ध्यातव्य है कि यह कोष केवल जनता के अंशदान से बना है और इसे कोई भी बजटीय सहायता नहीं मिलती है।
- प्रधानमंत्री राष्ट्रीय राहत कोष का गठन संसद द्वारा नहीं किया गया है। इस कोष की निधि को आयकर अधिनियम के तहत एक ट्रस्ट के रूप में माना जाता है और इसका प्रबंधन प्रधानमंत्री अथवा नामित अधिकारियों द्वारा राष्ट्रीय प्रयोजनों के लिये किया जाता है।
- वर्ष 1985 से इस कोष का कितना पैसा, किस आपदा पर खर्च होगा, यह सिर्फ प्रधानमंत्री की सिफारिश पर तय होने लगा।
- प्रधानमंत्री राष्ट्रीय राहत कोष का क्रियान्वयन प्रधानमंत्री कार्यालय द्वारा किया जा रहा है, जबकि PM CARES ट्रस्ट का संचालन किस मंत्रालय व किन अधिकारियों द्वारा किया जाएगा इस बात की कोई जानकारी नहीं है।
- PM CARES ट्रस्ट में विपक्ष के नेता व सिविल सोसाइटी के सदस्यों को शामिल नहीं किया गया है।

पीएम-केयर्स फंड के उद्देश्य

- इस फंड का मुख्य उद्देश्य है कि देश में किसी भी प्रकार की प्राकृतिक या मानवीय आपदा आने पर लोगों को आर्थिक और तकनीकी सहायता से साथ आधारभूत संरचना के विकास का काम भी किया जायेगा।
- यदि आवश्यक हुआ तो स्वास्थ्य सेवा या औषधि सुविधाओं का निर्माण उनके बारे में अनुसंधान और बुनियादी ढाँचे का विकास भी किया जायेगा।
- यदि बोर्ड के न्यासी आवश्यक समझें तो प्रभावित आबादी को वित्तीय सहायता प्रदान करने के लिये, पैसों के भुगतान या अनुदान भी प्रदान किया जा सकता है।

नोट :

निष्कर्ष:

COVID-19 महामारी से उत्पन्न चुनौतियाँ पहले कभी नहीं देखी गई, किसी प्रमाणिक उपचार के अभाव तथा इस बीमारी की अनिश्चितता को देखते हुए सरकार ने 'पीएम केयर्स फंड' की व्यवस्था की है ताकि किसी भी वैश्विक महामारी की स्थिति से निपटने में तत्काल सहायता की जा सके।

नेशनल रिक्रूटमेंट एजेंसी: आवश्यकता और महत्त्व

संदर्भ

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की अध्यक्षता में केंद्रीय मंत्रिमंडल ने केंद्र सरकार की नौकरियों के लिये भर्ती प्रक्रिया में परिवर्तनकारी सुधार लाने हेतु राष्ट्रीय भर्ती एजेंसी (National Recruitment Agency- NRA) के गठन को मंज़ूरी दे दी है।

वर्तमान में, सरकारी नौकरियों की तलाश करने वाले उम्मीदवारों को विभिन्न पदों के लिये कई भर्ती एजेंसियों द्वारा आयोजित अलग-अलग परीक्षाओं के लिये उपस्थित होना पड़ता है। NRA के आगमन के बाद पूरी प्रक्रिया एकीकृत हो जाएगी और छात्रों और एजेंसियों के लिये बोझिल प्रक्रिया को आसान बना देगा।

इस आलेख में नेशनल रिक्रूटमेंट एजेंसी, गठन की आवश्यकता, एजेंसी की विशेषताएँ, चुनौतियाँ और उसके लाभों पर विचार-विमर्श किया जाएगा।

नेशनल रिक्रूटमेंट एजेंसी

- नेशनल रिक्रूटमेंट एजेंसी (NRA) एक बहु-एजेंसी निकाय होगी, जिसके शासी निकाय में रेलवे मंत्रालय, वित्त मंत्रालय/वित्तीय सेवा विभाग, SSC, RRB तथा IBPS के प्रतिनिधि शामिल होंगे।
- एक विशेषज्ञ निकाय के रूप में नेशनल रिक्रूटमेंट एजेंसी (NRA), केंद्र सरकार की भर्ती प्रक्रिया में अत्याधुनिक प्रौद्योगिकी और सर्वोत्तम प्रक्रियाओं का पालन करेगी।
- नेशनल रिक्रूटमेंट एजेंसी, सोसायटी पंजीकरण अधिनियम, 1860 के तहत पंजीकृत होगी।
- नई व्यवस्था के अनुसार, सरकारी नौकरी के इच्छुक सभी उम्मीदवार NRA द्वारा आयोजित एक सामान्य योग्यता परीक्षा (Common Eligibility Test-CET) में केवल एक बार हिस्सा लेंगे, जिसके बाद वे सामान्य योग्यता परीक्षा (CET) के अंकों के आधार पर उच्च स्तर की परीक्षा के लिये किसी भी भर्ती एजेंसियों में आवेदन कर पाएंगे।
- सरकार ने नेशनल रिक्रूटमेंट एजेंसी (NRA) के लिये 1517.57 करोड़ रुपए की स्वीकृति प्रदान की है। इस व्यय को तीन वर्षों की अवधि में खर्च किया जाएगा।

गठन की आवश्यकता क्यों ?

- वर्तमान में, सरकारी नौकरी के इच्छुक उम्मीदवारों को पात्रता के समान शर्तों वाले विभिन्न पदों के लिये अलग-अलग भर्ती एजेंसियों द्वारा संचालित भिन्न-भिन्न परीक्षाओं में सम्मिलित होना पड़ता है, जिसके कारण उम्मीदवारों को अलग-अलग एजेंसियों के अलग-अलग शुल्क का भुगतान करना पड़ता है और साथ ही उम्मीदवारों को परीक्षा में हिस्सा लेने के लिये लंबी दूरी भी तय करनी पड़ती है, इससे उम्मीदवारों पर आर्थिक बोझ काफी हद तक बढ़ जाता है।
- इसके अलावा अलग-अलग भर्ती परीक्षाएँ उम्मीदवारों के साथ-साथ परीक्षाओं का आयोजन करने वाली एजेंसियों पर भी कार्य के बोझ को बढ़ा देती हैं, जिसमें बार-बार होने वाला खर्च, सुरक्षा व्यवस्था और परीक्षा केंद्रों से संबंधित मुद्दे शामिल हैं।
- आँकड़ों के अनुसार, भारत में प्रत्येक वर्ष लगभग 1.25 लाख सरकारी नौकरियों का विज्ञापन किया जाता है, जिनमें तकरीबन 2.5 करोड़ उम्मीदवार शामिल होते हैं।

विशेषताएँ

- सामान्य योग्यता परीक्षा (CET) मुख्यत: तीन स्तरों पर आयोजित की जाएगी- स्नातक, उच्च माध्यमिक (12वीं उत्तीर्ण) और मैट्रिक (10वीं उत्तीर्ण)।

- SSC, RRB तथा IBPS जैसी एजेंसियाँ यथावत बनी रहेंगी। सामान्य योग्यता परीक्षा (CET) के अंकों के स्तर पर की गई स्क्रीनिंग के आधार पर भर्ती की अंतिम चयन प्रक्रिया के लिये परीक्षा का आयोजन संबंधित एजेंसी द्वारा किया जाएगा।
- देश के प्रत्येक ज़िले में परीक्षा केंद्र स्थापित किये जाएंगे, जिससे दूर-दराज़ के क्षेत्रों में रहने वाले उम्मीदवारों को काफी लाभ प्राप्त होगा।
  - देश भर के 117 'आकांक्षी ज़िलों' (Aspirational Districts) में परीक्षा संरचना बनाने पर विशेष ध्यान दिया जाएगा जिससे आगे चलकर उम्मीदवारों को अपने निवास स्थान के निकट परीक्षा केंद्रों तक पहुँचने में मदद मिलेगी।
- उम्मीदवारों को CET में प्राप्त स्कोर परिणाम घोषित होने की तिथि से 3 वर्षों की अवधि के लिये वैध होंगे।
- सामान्य योग्यता परीक्षा (CET) का पाठ्यक्रम सामान्य होने के साथ-साथ मानक भी होगा। यह उन उम्मीदवारों के बोझ को कम करेगा, जो वर्तमान में प्रत्येक परीक्षा के लिये विभिन्न पाठ्यक्रम के अनुसार अलग-अलग पाठ्यक्रमों की तैयारियाँ करते हैं।

नेशनल रिक्रूटमेंट एजेंसी में शामिल परीक्षाएँ

- नेशनल रिक्रूटमेंट एजेंसी (NRA) द्वारा ग्रुप B और C (गैर-तकनीकी) पदों के लिये उम्मीदवारों की शॉर्टलिस्ट करने हेतु सामान्य योग्यता परीक्षा (CET) का आयोजन किया जाएगा।
- नेशनल रिक्रूटमेंट एजेंसी (NRA) द्वारा शुरुआत में उन परीक्षाओं के लिये सामान्य योग्यता परीक्षा (CET) का आयोजन किया जाएगा, जो मुख्यत: अब कर्मचारी चयन आयोग (SSC), रेलवे भर्ती बोर्ड (RRB) और इंस्टीट्यूट ऑफ बैंकिंग पर्सनल सेलेक्शन (IBPS) द्वारा संचालित किया जा रहा है।
- उपर्युक्त परीक्षाओं के सफलतापूर्वक संचालन के बाद इस बहु-एजेंसी निकाय के अंतर्गत कई अन्य परीक्षाओं को भी शामिल किया जा सकता है।

संबंधित चुनौतियाँ

- निजी क्षेत्र में सेवाओं को स्थानांतरित करने के प्रस्ताव के साथ भविष्य में कम सरकारी नौकरियाँ सृजित होने की आशंका है।
- केवल 14 प्रतिशत सार्वजनिक रोज़गार केंद्र (मुख्य रूप से रेलवे और रक्षा में) के दायरे में आते हैं, जबकि शेष भर्ती परीक्षाएँ राज्यों के दायरे में आती हैं।
- इस तरह के सुधारों की दीर्घकालिक प्रासंगिकता सार्वजनिक रोज़गार के स्तर को बढ़ाने और जनता तक सेवाओं का विस्तार करने की सरकारों की प्रतिबद्धता पर निर्भर करेगी।

लाभ

- सामान्य योग्यता परीक्षा (CET) के माध्यम से उम्मीदवारों के लिये कई परीक्षाओं में उपस्थित होने की परेशानी को दूर किया जा सकेगा।
- चूँकि परीक्षा केंद्र सभी ज़िलों में स्थापित किये जाएंगे, इससे दूर-दराज़ के क्षेत्र में रहने वाले उम्मीदवार भी परीक्षा में शामिल होने के लिये प्रोत्साहित होंगे और इस प्रकार भविष्य में केंद्र सरकार की नौकरियों में उनके प्रतिनिधित्व को बढ़ावा मिलेगा।
  - प्रत्येक ज़िले में परीक्षा केंद्रों की अवस्थिति से सामान्य तौर पर ग्रामीण क्षेत्रों के उम्मीदवारों तथा विशेष रूप से महिला उम्मीदवारों को भी अधिक लाभ होगा।
  - रोज़गार के अवसरों को लोगों तक पहुँचाना एक महत्त्वपूर्ण कदम है जिससे युवाओं की जिंदगी और आसन हो जाएगी।
- वर्तमान में, उम्मीदवारों को बहु-एजेंसियों द्वारा संचालित की जा रही विभिन्न परीक्षाओं में भाग लेना होता है। परीक्षा शुल्क के अतिरिक्त उम्मीदवारों को यात्रा, रहने-ठहरने और अन्य चीजों पर अतिरिक्त व्यय करना पड़ता है। सामान्य योग्यता परीक्षा (CET) जैसी एकल परीक्षा से काफी हद तक उम्मीदवारों पर वित्तीय बोझ कम होगा।
- सामान्य योग्यता परीक्षा (CET) अनेक भाषाओं में उपलब्ध होगी। यह देश के विभिन्न हिस्सों से लोगों को परीक्षा में बैठने और चयनित होने के समान अवसर को प्राप्त करने को सुविधाजनक बनाएगा।
- इससे परीक्षा के प्रारूप में मानकीकरण स्थापित किया जा सकेगा।

नोट :

- सामान्य योग्यता परीक्षा (CET) के माध्यम से परीक्षा आयोजन में विभिन्न भर्ती एजेंसियों द्वारा किये जाने वाले खर्च में कमी आएगी, एक अनुमान के अनुसार, इसके कार्यान्वयन से लगभग 600 करोड़ रुपए की बचत की उम्मीद है।
- विशेष रूप से पहाड़ी और ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले उम्मीदवारों को यात्रा, आवास, अपने परीक्षा केंद्रों तक पहुँचने के लिये अतिरिक्त खर्च नहीं उठाना पड़ेगा जो आमतौर पर उनके गृह नगर से दूर होते हैं।
- महिलाएँ आम तौर पर अपने परीक्षा केंद्र तक पहुँचने में अभिभावक (पिता/भाई/पति) पर निर्भर रहती हैं, यदि यह उनके गृहनगर से बहुत दूर है। हर जिले में परीक्षा केंद्रों का स्थान उम्मीदवारों, विशेषकर महिलाओं को लाभान्वित करेगा।

निष्कर्ष

नेशनल रिक्रूटमेंट एजेंसी को एक अद्वितीय मॉडल के रूप में देखा जा रहा है, क्योंकि यह सरकारी भर्ती प्रक्रिया में परिवर्तन का प्रतीक बनेगा। NRA उम्मीदवारों के लिये सुविधा और लागत प्रभावशीलता का एक संयोजन है। निश्चित तौर पर यह उन उम्मीदवारों के बोझ को कम करेगा, जो वर्तमान में प्रत्येक परीक्षा के लिये विभिन्न पाठ्यक्रम के अनुसार अलग-अलग पाठ्यक्रमों की तैयारियाँ करते हैं।

दृष्टि The Vision

आर्थिक घटनाक्रम

खाद्य असुरक्षा: समस्या और समाधान

संदर्भ

विश्व में खाद्य सुरक्षा और पोषण अवस्था (State of Food Security and Nutrition in the World) संबंधी रिपोर्ट के नवीनतम संस्करण के अनुसार, भारत सबसे बड़ी खाद्य असुरक्षित आबादी वाला देश है। खाद्य और कृषि संगठन (Food and Agriculture Organization) तथा अन्य अंतर्राष्ट्रीय संगठनों के सहयोग से जारी की जाने वाली इस रिपोर्ट में प्रस्तुत अनुमान बताते हैं कि वर्ष 2014 से 2019 तक खाद्य असुरक्षा का दायरा 3.8 प्रतिशत तक बढ़ गया है। वर्ष 2014 के सापेक्ष वर्ष 2019 तक 6.2 करोड़ अन्य लोग भी खाद्य असुरक्षा के दायरे में आ गए हैं।

वस्तुत: खाद्य सुरक्षा के सामान्य सिद्धांत के अंतर्गत तीन प्रमुख आयामों यथा - पहुँच, उपलब्धता, और उपयोग को शामिल किया जाता है। सार्वभौमिक मानवाधिकार घोषणापत्र (Universal Declaration of Human Rights) और आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय अनुबंध (International Covenant on Economic, Social and Cultural Rights) के सदस्य के रूप में भारत पर भूख से मुक्त होने और पर्याप्त भोजन के अधिकार को सुनिश्चित करने का दायित्व है।

इस आलेख में रिपोर्ट के प्रमुख तथ्य, खाद्य असुरक्षा से तात्पर्य, उसके प्रकार, भारत में खाद्य संकट का ऐतिहासिक विवरण, खाद्य असुरक्षा के कारण, सरकार के द्वारा किये जा रहे प्रयास तथा अन्य वैकल्पिक समाधानों पर भी विमर्श किया जाएगा।

रिपोर्ट संबंधी अन्य तथ्य

- रिपोर्ट के अनुसार, वैश्विक महामारी COVID-19 के कारण वर्ष 2030 तक शून्य भुखमरी के लक्ष्य को प्राप्त करना कठिन प्रतीत हो रहा है। ऐसे में सतत विकास लक्ष्य-2 (भुखमरी का अंत, खाद्य सुरक्षा और बेहतर पोषण तथा सतत् कृषि को प्रोत्साहन) को प्राप्त करने में भी बाधाएँ उत्पन्न होंगी।
- वैश्विक महामारी COVID-19 के कारण आई आर्थिक मंदी से विश्वभर में लगभग 8-13 करोड़ अन्य लोगों के इस वर्ष भुखमरी के कगार पर पहुँचने की संभावना व्यक्त की गई है।
- रिपोर्ट से पता चलता है कि वर्ष 2014-16 में भारत की 27.8 प्रतिशत आबादी मध्यम या गंभीर खाद्य असुरक्षा से पीड़ित थी, जबकि वर्ष 2017-19 में यह अनुपात बढ़कर 31.6 प्रतिशत हो गया है।
- वर्ष 2014-16 में खाद्य असुरक्षित लोगों की संख्या 42.65 करोड़ से बढ़कर वर्ष 2017-19 में 48.86 करोड़ हो गई है।

खाद्य असुरक्षा से तात्पर्य

- खाद्य असुरक्षा को धन अथवा अन्य संसाधनों के अभाव में पौष्टिक और पर्याप्त भोजन तक अनियमित पहुँच के रूप में परिभाषित किया जाता है।
- खाद्य असुरक्षा के दौरान लोगों को भुखमरी का सामना करना पड़ता है।

खाद्य असुरक्षा के प्रकार

- खाद्य असुरक्षा को मुख्यत: दो भागों में विभाजित किया जा सकता है:
  - मध्यम स्तरीय खाद्य असुरक्षा: मध्यम स्तरीय खाद्य संकट से अभिप्राय उस स्थिति से है जिसमें लोगों को कभी-कभी खाद्य की अनियमित उपलब्धता का सामना करना पड़ता है और उन्हें भोजन की मात्रा एवं गुणवत्ता के साथ भी समझौता करना पड़ता है।
  - गंभीर खाद्य संकट: गंभीर खाद्य संकट का अभिप्राय उस स्थिति से है जिसमें लोग कई दिनों तक भोजन से वंचित रहते हैं और उन्हें पौष्टिक एवं पर्याप्त आहार उपलब्ध नहीं हो पाता है। लंबे समय तक यथावत बने रहने पर यह स्थिति भूख की समस्या का रूप धारण कर लेती है।

भारत में खाद्य असुरक्षा का ऐतिहासिक विवरण

- स्वतंत्रता के बाद से ही खाद्यान्न उत्पादन और खाद्य सुरक्षा देश के लिये बड़ी चुनौती रही है।
- भारत में खाद्य सुरक्षा से संबंधित चिंताओं का इतिहास वर्ष 1943 में ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन के दौरान हुए बंगाल अकाल में देखा जा सकता है, जिसके दौरान भुखमरी के कारण लगभग 2 मिलियन से 3 मिलियन लोगों की मृत्यु हो गई थी।
- भारत में 1960 के दशक के अंत और 1970 के दशक की शुरुआत में हरित क्रांति ने दस्तक दी, जिससे देश के खाद्यान्न उत्पादन में काफी सुधार आया। हरित क्रांति की सफलता के बावजूद भी इसकी यह कहकर आलोचना की गई कि इसमें केवल गेहूँ और चावल पर अधिक ध्यान दिया गया था।
- आँकड़ों के अनुसार, भारत में वर्ष 2019 में सबसे अधिक कुपोषित लोग मौजूद थे।
- खाद्य एवं कृषि संगठन (Food and Agriculture Organisation-FAO) की रिपोर्ट के अनुसार, भारत की तकरीबन 14.8 प्रतिशत जनसंख्या कुपोषित है।

भारत में खाद्य असुरक्षा के कारण

- वर्तमान समय में भारत में खाद्यान्न सुरक्षा की दृष्टि से सबसे बड़ी समस्या गरीबी है। वर्तमान समय में भारत की लगभग एक चौथाई जनता गरीबी से जूझ रही है। ऐसे में ये आर्थिक कमी के कारण पोषण-युक्त भोजन खरीद नहीं पाते और कुपोषण का शिकार होते हैं।
- भारत में पारंपरिक रूप से गुणवत्तापूर्ण खाने के स्थान पर अधिक भोजन खाने को महत्त्व दिया जाता है, ऐसे लोगों में संतुलित भोजन के स्थान पर अनाज को ग्रहण करने की प्रवृत्ति अधिक पाई जाती है। इससे प्रोटीन तथा अन्य पोषक पदार्थों की कमी हो जाती है।
- इसके अलावा धार्मिक रुझानों के कारण मांसाहार के प्रति नकारात्मक प्रवृत्ति भी कुपोषण का एक कारण है। अंडा जैसे उत्पाद अपेक्षाकृत कम कीमत में प्रोटीन के अच्छे स्रोत है।
- हमारी सरकार की न्यूनतम समर्थन मूल्य की नीति भी अनाजों के पक्ष में है। इससे कृषक प्रोटीन युक्त पदार्थों के स्थान पर अनाजों की खेती को अधिक महत्त्व देते हैं और हमारी खाद्य सुरक्षा प्रभावित होती है।
- इसके अलावा गरीबों की उचित पहचान नहीं हो पाने के कारण वे कई सरकारी योजनाओं का लाभ नहीं ले पाते और खाद्य असुरक्षा का शिकार हो जाते हैं।
- विश्व व्यापार संगठन जनता के लिये व्यापार की सुगमता के नाम पर खाद्यान्नों पर सब्सिडी कम करने का दबाव बना रहा है। इससे भारत सरकार गरीबों को कम कीमत पर अनाज उपलब्ध नहीं कर पाएगी जिससे भारत में कुपोषण की संख्या और बढ़ेगी।
- इसके अलावा अवसंरचना के अभाव से भी खाद्य सुरक्षा प्रभावित होती है। उदाहरण के लिये भंडारगृहों के कमी से लगभग 25 प्रतिशत अनाज बर्बाद हो जाता है जिससे शेष अनाज की कीमत में वृद्धि हो जाती है। उसी प्रकार सड़क जैसी अवसंरचना के अभाव के कारण खाद्य वस्तुओं की पहुँच कमजोर होती है।

COVID-19 और खाद्य संकट

- संयुक्त राष्ट्र प्रमुख ने आगाह किया कि विश्व की 7 अरब 80 करोड़ आबादी का पेट भरने के लिये दुनिया में पर्याप्त भोजन उपलब्ध है लेकिन इसके बावजूद 82 करोड़ से अधिक लोग भुखमरी का शिकार हैं।
- इस वर्ष COVID-19 संकट के कारण 4 करोड़ 90 लाख अतिरिक्त लोग अत्यधिक गरीबी का शिकार हो सकते हैं और पोषणयुक्त भोजन की कमी के शिकार लोगों की संख्या में तेज़ी से बढ़ोत्तरी होने की आशंका है।
- यहाँ तक कि जिन देशों में प्रचुर मात्रा में भोजन उपलब्ध है, वहाँ भी खाद्य आपूर्ति श्रृंखला में व्यवधान पैदा होने का जोखिम दिखाई दे रहा है।

खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने की त्रिविमीय अवधारणा

- बाज़ार में खाद्यान्न की उपलब्धता: सर्वप्रथम बाज़ार में खाद्यान्न की पर्याप्त उपलब्धता सुनिश्चित करनी होगी। इसके लिये कृषि विपणन स्थलों में सुधार करने की आवश्यकता है। सरकार द्वारा पूर्व में कई महत्त्वपूर्ण सुधार किये गए हैं, जो इस प्रकार हैं-
    - मॉडल एग्रीकल्चर लैंड लीसिंग एक्ट (Model Agricultural Land Leasing Act) 2016 राज्यों को जारी किया गया, जो कृषि सुधारों के संदर्भ में अत्यंत ही महत्त्वपूर्ण कदम है जिसके माध्यम से न सिर्फ भू-धारकों वरन लीज़ प्राप्तकर्त्ता की ज़रूरतों का भी ख्याल रखा गया है।

नोट :

- राष्ट्रीय कृषि मंडी स्कीम (ई-नाम) के तहत बेहतर मूल्य सुनिश्चित करके, पारदर्शिता और प्रतियोगिता के माध्यम से कृषि मंडियों में क्रांति लाने की एक नवाचारी मंडी प्रक्रिया प्रारंभ की गई।
- सरकार ने मॉडल कॉन्ट्रैक्ट फार्मिंग एंड सर्विसेज एक्ट (Model Contract Farming and Services Act), 2018 जारी किया है जिसमें पहली बार देश के अन्नदाता किसानों तथा कृषि आधारित उद्योगों को जोड़ा गया है।

- लोगों की खाद्यान्न तक पहुँच सुनिश्चित करना
  - खाद्यान्न तक पहुँच बेहतर क्रय शक्ति पर निर्भर करती है। कृषक के अतिरिक्त प्रत्येक को बाज़ार से खाद्यान्न क्रय करना पड़ता है। इस वैश्विक महामारी के दौरान आर्थिक गतिविधियाँ बाधित होने से लोगों की पास धन का संकट है, परंतु मनरेगा जैसी योजना के कारण लाखों लोगों को रोज़गार प्राप्त हुआ है जिससे उनकी पहुँच खाद्यान्न तक सुनिश्चित हो पाई है।
  - इस संकट के दौरान सरकार के द्वारा राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम (National Food Security Act-NFSA) और सार्वजनिक वितरण प्रणाली (Public Distribution System-PDS) के माध्यम से ज़रूरतमंद प्रत्येक व्यक्ति को अतिरिक्त राशन भी उपलब्ध कराया गया है।
  - राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम व सार्वजनिक वितरण प्रणाली में निर्धारित खाद्य उत्पादों के अतिरिक्त बाजरा, दाल व तेल जैसे अन्य खाद्य उत्पादों को भी शामिल करना चाहिये।
  - खाद्य सब्सिडी योजना के अंतर्गत खाद्य सुरक्षा के लिये सरकार समय-समय पर खाद्य सब्सिडी जारी करती है ताकि खाद्य संकट पैदा न हो।
- भोज्य पदार्थों का अवशोषण व उपयोग
  - खाद्य सुरक्षा का तीसरा आयाम है शरीर में भोजन का अवशोषण तथा उसका समुचित उपयोग।
  - भोजन का अवशोषण और उपयोग सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवाओं सहित स्वच्छता, पीने योग्य जल और अन्य गैर-खाद्य कारकों पर महत्त्वपूर्ण ढंग से निर्भर है।
  - COVID-19 संक्रमण के कारण बार-बार हाथों को धुलने से ग्रामीण व शहरी दोनों ही क्षेत्रों में स्वच्छ पीने योग्य जल की कमी महसूस की जा रही है।

खाद्य सुरक्षा की वैकल्पिक विधियाँ

- खाद्यान्न कूपन प्रणाली- सार्वजनिक वितरण प्रणाली को अधिक प्रभावी बनाने के लिये निर्धनता रेखा से नीचे रहने वाले प्रत्येक परिवार को खाद्यान्न कूपन देकर उसे सार्वजनिक वितरण प्रणाली की दुकानों पर मुद्रा के स्थान पर स्वीकार किया जाना चाहिये। ऐसी दुकानों पर गेंहूँ-चावल की बिक्री प्रचलित बाज़ार मूल्य पर होनी चाहिये, परिणामस्वरूप भ्रष्टाचार की संभावना कम होगी। इस कूपन प्रणाली में सही सफलता तभी प्राप्त होगी जबकि निर्धनों की पहचान के लिये विशिष्ट पहचान संख्या लागू की जाए।
- बहु-उपयोगी स्मार्ट कार्ड- प्रौद्योगिकी विकास के साथ-साथ बहु-उपयोगी स्मार्ट कार्ड व्यवस्था अस्तित्व में आई है। इन कार्डों के माध्यम से विभिन्न योजनाओं के क्रियान्वयन को सरल बनाया जा सकता है। इस प्रकार यदि सभी अर्ह परिवारों की पहचान, अधिकृत लेन-देन की जानकारी तथा प्राप्त खाद्यान्न की मात्रा आदि का विवरण ऑन-लाइन उपलब्ध हो तो खाद्यान्न के निर्गम के समय इसकी पुष्टि की जा सकती है। विवरण की जानकारी भी ऑन-लाइन हो जाने से कार्यक्रम की प्रगति भी आसान हो जाएगी।
- बफर स्टॉक बढ़ाना अत्यावश्यक- सार्वजनिक वितरण प्रणाली में खाद्यान्नों, दालों, चीनी इत्यादि वस्तुओं के भंडारण व आयात का पूर्वानुमान लगाकर बफर स्टॉक बनाए जाने की रणनीति तैयार की जानी चाहिये जिससे भ्रष्टाचार और जमाखोरी को रोका जा सके।

निष्कर्ष

COVID-19 संक्रमण के दौरान भारत स्वास्थ्य चुनौतियों के अतिरिक्त जिन चुनौतियों का सामना कर रहा है, उनमें से खाद्य सुरक्षा की चुनौती सबसे प्रमुख चुनौतियों में से एक है। तेज़ी से बढ़ती हुई जनसंख्या, बढ़ते खाद्य मूल्य और जलवायु परिवर्तन का खतरा ऐसी चुनौतियाँ है जिनसे युद्ध स्तर पर निपटे जाने की आवश्यकता है। स्वामी विवेकानंद ने कहा था कि ''जो व्यक्ति अपना पेट भरने के लिये जूझ रहा हो उसे दर्शन नहीं समझाया जा सकता है।" यदि भारत को विकसित राष्ट्रों की सूची में शामिल होना है, तो उसे अपनी खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करनी होगी।

राजकोषीय परिषद: आवश्यकता व महत्त्व

संदर्भ

वैश्विक महामारी COVID-19 की चुनौतियों से निपटने के लिये सरकार को अधिक व्यय करना पड़ रहा है जबकि आर्थिक गतिविधियों के मंद होने से अपेक्षानुरूप राजस्व की प्राप्ति नहीं हो रही है। वित्तीय वर्ष 2019-20 में नियंत्रक महालेखाकार (Controller General of Accounts-CGA) द्वारा अनुमानित राजकोषीय घाटा संशोधित अनुमान से 0.8 प्रतिशत अधिक 4.6 प्रतिशत है। चालू वित्तीय वर्ष में बिना किसी राजकोषीय प्रोत्साहन के राजकोषीय घाटा सकल घरेलू उत्पाद के 7.0 प्रतिशत तक अनुमानित है।संघ और राज्यों का समेकित राजकोषीय घाटा सकल घरेलू उत्पाद के 12 प्रतिशत के बराबर हो सकता है और समग्र ऋण 85 प्रतिशत तक पहुँच सकता है।

विदित है कि COVID-19 महामारी के कारण उत्पन्न आर्थिक चुनौतियों के इस दौर में भारत में कई अर्थशास्त्रियों का मानना है कि भारत सरकार को अपना खर्च बढ़ाना चाहिये ताकि अर्थव्यवस्था को पटरी पर लाया जा सके। दूसरी तरफ सरकार को यह डर है कि अधिक खर्च करने से सरकार पर कर्ज का बोझ और राजकोषीय घाटा अनियंत्रित रूप से बढ़ सकते हैं। इस स्थिति में क्रेडिट रेटिंग एजेंसियाँ भारतीय अर्थव्यवस्था की रेटिंग कम कर सकती हैं, इससे देश में निवेश भी कम आयेगा। अर्थव्यवस्था में निवेश के कम आने से आर्थिक गतिविधियाँ नकारात्मक रूप से प्रभावित होती हैं और अर्थव्यवस्था मंदी की स्थिति में जा सकती है।

महामारी के प्रकोप के बीच आर्थिक गतिविधियों को बढ़ाने और सरकार की राजकोषीय घाटा एवं अन्य चिंताओं के बीच संतुलन स्थापित करने हेतु राजकोषीय परिषद के गठन की बात की जा रही है ताकि राजकोषीय प्रबंधन को स्वतंत्र रूप से परिस्थितियों के मुताबिक प्रबंधित किया जा सके।

राजकोषीय परिषद क्या है ?

- सर्वप्रथम इसकी अनुशंसा 13वें वित्त आयोग द्वारा की गई थी और बाद में 14वें वित्त आयोग और राजकोषीय उत्तरदायित्व एवं बजट प्रबंधन समीक्षा समिति द्वारा भी इसे समर्थन प्राप्त हुआ जिसकी अध्यक्षता एन.के. सिंह द्वारा की गई थी।
- राजकोषीय परिषद मूल रूप में एक स्थायी एजेंसी है जिसे सरकार के राजकोषीय योजना एवं आर्थिक स्थिरता संबंधी मापदंडों के संबंध में किये गए अनुमानों का स्वतंत्र रूप से मूल्यांकन करने का जनादेश प्राप्त है।
- राजकोषीय परिषद एक ऐसी स्थायी संस्था होती है जो सरकार की राजकोषीय योजना का स्वतंत्र रूप से मूल्यांकन या विश्लेषण करती है तथा अपने महत्त्वपूर्ण सुझावों को प्रस्तुत करती है। राजकोषीय योजना के मूल्यांकन के तहत सरकार के महत्त्वाकांक्षी लक्ष्यों यथा- अग्रिम वर्षों में राजकोषीय घाटा को कितना कम करना है, अर्थव्यवस्था की वृद्धि दर को कितना लेकर जाना है आदि, का विश्लेषण करना होता है।

राजकोषीय परिषद के कार्य

- राजकोषीय परिषद का उद्देश्य बहु-वर्षीय राजकोषीय प्रक्षेपण (Multi-year fiscal projection) भी है। बहु-वर्षीय राजकोषीय प्रक्षेपण का तात्पर्य यह है कि राजकोषीय परिषद को राजकोषीय प्रबंधन एवं इससे संबंधित अन्य बातों का आकलन करना होगा, जैसे कि चालू वित्त वर्ष में भारतीय अर्थव्यवस्था की वृद्धि दर कितनी रहेगी या फिर आगे आने वाले वर्षों में यह कैसे हो सकती है इत्यादि।
- इस संस्था द्वारा राजकोषीय स्थिरता का विश्लेषण तैयार किया जाता है। जब राजस्व की प्राप्ति और खर्च संतुलन की अवस्था में हो और सरकार सुचारु रूप से चलती रहे तो इसे राजकोषीय स्थिरता की स्थिति कहते हैं। ध्यातव्य है कि 1990 के दशक में राजकोषीय स्थिरता को गंभीर रूप से तब नुकसान पहुँचा था जब भारत सरकार के समक्ष भुगतान संतुलन (Balance of Payment) का संकट खड़ा हो गया था।
- सरकार अपने तय लक्ष्यों के अनुरूप (FRBM कानून के तहत) राजकोषीय घाटे के लक्ष्य को प्राप्त कर पाई है या नहीं, इस बात का मूल्यांकन राजकोषीय परिषद द्वारा किया जाता है। इसके लिये परिषद एक मूल्यांकन रिपोर्ट तैयार करती है।
- सरकार राजकोषीय नियमों का पालन किस प्रकार से कर रही है राजकोषीय परिषद इस तथ्य का भी मूल्यांकन करती है।
- सरकार द्वारा बजट में की गयी घोषणाओं को भविष्य में कैसे आसानी से लागू किया जाए, इसके लिये राजकोषीय प्रबंधन में जरूरी संशोधनों का सुझाव परिषद द्वारा किया जाता है।
- राजकोषीय परिषद द्वारा वार्षिक राजकोषीय रणनीतिक रिपोर्ट (Annual fiscal strategic report) भी तैयार की जाती है और उसे पब्लिक डोमेन में रखा जाता है ताकि राजकोषीय प्रबंधन में पारदर्शिता को स्थापित किया जा सकता है।

राजकोषीय परिषद की आवश्यकता

- पक्ष में तर्क
  - विशेषज्ञों के एक वर्ग का मानना है कि राजकोषीय परिषद के कार्यों को भारत में विभिन्न संस्थाओं द्वारा विभिन्न रूपों में संपन्न किया जा रहा है लेकिन फिर भी यदि राजकोषीय परिषद की स्थापना की जाएगी तो राजकोषीय प्रबंधन और बेहतर ढंग से हो सकेगा।
  - अंतर्राष्ट्रीय अनुभव बताते हैं कि राजकोषीय परिषद सार्वजनिक वित्त पर बहस की गुणवत्ता में सुधार करती है और इससे, राजकोषीय अनुशासन के अनुकूल सार्वजनिक राय बनाने में मदद मिलती है।
  - पिछले आठ वर्षों से सरकार के अनुमानों में लगातार 10 प्रतिशत की कमी आई है, जिससे वर्ष के मध्य में फंड में कटौती हुई है। इस प्रकार एक स्वतंत्र राजकोषीय परिषद तय मानदंडों के अनुसार बजट प्रस्तावों और पूर्वानुमानों का मूल्यांकन करेगी।
  - इससे सरकार की राजकोषीय प्रतिबद्धता के बारे में वैश्विक क्रेडिट रेटिंग एजेंसियों में विश्वास बढ़ेगा।
- विपक्ष में तर्क
  - कुछ विशेषज्ञ यह प्रश्न उठाते हैं कि क्या वास्तव में भारत में राजकोषीय परिषद के गठन की आवश्यकता है? जबकि इस परिषद के द्वारा किये जाने वाले कार्यों को भारत में विभिन्न कानून एवं संस्थाएँ कर रही हैं, जैसे कि FRBM कानून (2003) में सरकार के लिये आगे आने वाले वर्षों में राजकोषीय घाटे को कितना कम करना है, यह निर्धारित कर दिया गया है। यदि सरकार इन लक्ष्यों से विचलित होती है तो उसको इसका स्पष्टीकरण प्रदान करना होगा।
  - संसद में भारत सरकार को एक राजकोषीय नीति रणनीति स्टेटमेंट (Fiscal Policy Strategy Statement-FPSS) रखना होता है ताकि सरकार की राजकोषीय नीति से संबंधित स्थितियाँ स्पष्ट हो सकें और संसद में इस पर सार्थक बहस हो सके। जब उपर्युक्त कार्य पहले से ही संसद में किया जा रहा है तो इसके लिये एक नई संस्था के निर्माण की औचित्यता पर कुछ विशेषज्ञ सवाल खड़ा कर रहे हैं।
  - राजकोषीय परिषद भारतीय अर्थव्यवस्था की वृद्धि दर के संदर्भ में समय-समय पर अनुमान व्यक्त करने के साथ वर्तमान वृद्धि दर का विश्लेषण भी करता है, लेकिन यह कार्य भारत में कई सरकारी एजेंसियाँ कर रही हैं जैसे- भारतीय रिज़र्व बैंक, केंद्रीय सांख्यिकीय संगठन आदि। इसके अतिरिक्त अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष, विश्व बैंक आदि भी ऐसे आँकड़ें प्रस्तुत करती हैं।
  - भारत का नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक भी सरकार की राजकोषीय नीतियों का विश्लेषण करता है और इस संबंध में रिपोर्ट तैयार करता है।

राजकोषीय परिषद की चुनौतियाँ

- राजनैतिक इच्छा में कमी से गंभीर राजकोषीय गैर-जिम्मेदारियों में वृद्धि होगी
  - वर्ष 2003 में जब FRBM को कानून के दायरे में लाया गया था, तब इस पर वित्तीय समस्याओं के उपाय के रूप में विचार किया गया था।
  - FRBM सरकार को पूर्व-निर्धारित राजकोषीय लक्ष्यों के अनुरूप तथा इसमें विफल रहने पर विचलन संबंधी कारणों की व्याख्या करने में मदद करता है।
  - सरकार को अपने राजकोषीय उद्देश्यों की विश्वसनीयता प्रदर्शित करने हेतु FPSS को संसद में प्रस्तुत करना आवश्यक होता है।
  - हालाँकि राजकोषीय उद्देश्यों पर संसद में गहन चर्चा का अभाव है और FPSS का प्रस्ताव अक्सर बगैर किसी सूचना के हो जाता है।
- इसके कार्यों से भ्रम की स्थिति उत्पन्न होना
  - राजकोषीय परिषद व्यापक आर्थिक पूर्वानुमान प्रदान करेगी जिसे वित्त मंत्रालय द्वारा बजट हेतु उपयोग किये जाने की उम्मीद है और यदि मंत्रालय उन अनुमानों से अलग जाने का निर्णय लेता है तो यह व्याख्या करनी आवश्यक होगी कि अलग जाने की जरूरत क्या थी।
  - इसके अलावा वित्त मंत्रालय को किसी अन्य अनुमान को उपयोग में लाने हेतु मजबूर करना इसकी जवाबदेहिता को कम करेगा।
- कार्यों का दोहराव
  - अब तक केंद्रीय सांख्यिकी कार्यालय (CSO) और RBI दोनों विकास और अन्य वृहद आर्थिक चरों (Variables) का पूर्वानुमान देते हैं, परंतु अब राजकोषीय परिषद के अनुमानों के बारे में सवाल उठाए जाएंगे।

नोट :

- राजकोषीय परिषद निगरानी तंत्र के रूप में कार्य करेगी और सरकार को रचनात्मक लेखांकन के माध्यम से राजकोषीय नियमों के उल्लंघन से रोकेगी।
- हालाँकि सरकारी खर्चों की लेखा परीक्षा और राजकोषीय निगरानी का काम करने के लिये कैग के रूप में पहले से ही एक संस्थागत तंत्र है।

आगे की राह

- COVID-19 महामारी ने अभूतपूर्व आर्थिक चुनौतियों को उत्पन्न किया है। इसके लिये राजकोषीय परिषद की स्थापना की जानी चाहिये ताकि राजकोषीय प्रबंधन को बेहतर तरीके से प्रबंधित किया जा सके।
- जब तक सरकार राजकोषीय परिषद को स्थापित नहीं कर पा रही है, उसके पहले कुछ अन्य छोटे-छोटे प्रयास किये जा सकते हैं जैसे- जब सरकार बजट प्रस्तुत करे तो उसके तुरंत बाद कैग की देखरेख में एक समिति गठित की जा सकती है। (जिसमें आरबीआई, नीति आयोग, वित्त मंत्रलय, सीएसओ आदि का भी योगदान लेना चाहिए) यह समिति सरकार के बजटीय तथ्यों का सूक्ष्म रूप से विश्लेषण कर राजकोषीय नीति के संबंध में एक रिपोर्ट तैयार करेगी जो भविष्य के लिये मार्गदर्शक का कार्य कर सकती है।

कृषि बाज़ार सुधारों को सफल बनाने की आवश्यकता

संदर्भ

वैश्विक महामारी COVID-19 के कारण लगाए गए लॉकडाउन ने अर्थव्यवस्था के अधिकांश क्षेत्रों को बुरी तरह प्रभावित किया है, ऐसे में कृषि पुन: आर्थिक विकास के इंजन और महत्त्वपूर्ण उपशामक के रूप में चर्चा के केंद्र में आ गई है। आवश्यक वस्तु अधिनियम के तहत प्रतिबंधों को हटाने से कृषि में निज़ी निवेश को आकर्षित करने में सहूलियत हुई है। सरकार को अनाज, दलहन, तिलहन, प्याज और आलू के किसानों की विशेष मदद करनी चाहिये, जो निजी निवेश को हतोत्साहित करने वाले नीति शासन द्वारा प्रतिकूल रूप से प्रभावित हुए हैं।

सरकार द्वारा पारित नए अध्यादेशों से अंतर-राज्य व्यापार को सक्षम करने और अनुबंध खेती को बढ़ावा देने की उम्मीद है, जिससे किसानों को बड़ी सहायता प्राप्त होगी। कृषि में अनिश्चितताओं और जोखिमों को ध्यान में रखते हुए सरकार की नीतिगत प्रयासों में अब फसल और पशुधन में जोखिम को समाप्त करने के उपायों में सुधार, बेहतर कृषि-रसद के आधुनिकीकरण और कृषि बाजारों के निकट, पर्याप्त भंडारण सुविधाओं के प्रावधान के साथ विपणन उपायों के लिये प्रभावी सरकारी हस्तक्षेप सुनिश्चित करने पर ध्यान केन्द्रित करना शुरू कर दिया है।

कृषि में व्यापक परिवर्तन की आवश्यकता क्यों ?

- भारतीय कृषि ने निर्वाह कृषि की अवधि से लेकर अधिशेष कृषि उत्पादन को बढ़ाने तक का लंबा सफर तय किया है। यह स्थिति पूरी तरह से कृषि आधारभूत ढाँचे के पारिस्थितिकी-तंत्र के विकास की दिशा में एक क्रांतिकारी बदलाव का आह्वान करती है।
- किसान को लाभकारी मूल्य पर अपनी उपज को बेचने के लिये पर्याप्त विकल्प उपलब्ध कराने, निर्बाध अंतर्राज्यीय व्यापार, कृषि उत्पादों की ई-ट्रेडिंग के लिये एक रूपरेखा बनाने की दिशा में केंद्रीय विपणन कानून का निर्माण करने की आवश्यकता है।
- उल्लेखनीय है कि भारत में कृषि क्षेत्र की गिरती साख का प्रमुख कारण भूमि विखंडन की स्थिति है। भूमि विखंडन के कारण न तो आशाजनक नतीजे ही प्राप्त हो पाए हैं और न ही कृषिगत उत्पादकता में वृद्धि हो पाई है। स्पष्ट रूप से इस स्थिति के संदर्भ में गंभीरता से विचार करने तथा इस समस्या का समाधान किये जाने की आवश्यकता है।

कृषि क्षेत्र से संबंधित चुनौतियाँ

- पूर्व में कृषि क्षेत्र से संबंधित भारत की रणनीति मुख्य रूप से कृषि उत्पादन बढ़ाने और खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने पर केंद्रित रही है जिसके कारण किसानों की आय में बढ़ोतरी करने पर कभी ध्यान नहीं दिया गया।
- विगत पचास वर्षों के दौरान हरित क्रांति को अपनाए जाने के बाद, भारत का खाद्य उत्पादन 3.7 गुना बढ़ा है जबकि जनसंख्या में 2.55 गुना वृद्धि हुई है, किंतु किसानों की आय वृद्धि संबंधी आँकड़े अभी भी निराशाजनक हैं।
  - ज्ञात हो कि केंद्र सरकार ने वर्ष 2022 तक किसानों की आय दोगुनी करने का लक्ष्य निर्धारित किया है, जो कि इस दिशा में महत्त्वपूर्ण कदम है किंतु यह लक्ष्य काफी चुनौतिपूर्ण माना जा रहा है।

- लगातार बढ़ते जनसांख्यिकीय दबाव, कृषि में प्रच्छन्न रोज़गार और वैकल्पिक उपयोगों के लिये कृषि भूमि के रूपांतरण जैसे कारणों से औसत भूमि धारण (Land Holding) में भारी कमी देखी गई है। आँकड़ों के अनुसार, वर्ष 1970-71 में औसत भूमि धारण 2.28 हेक्टेयर था जो वर्ष 1980-81 में घटकर 1.82 हेक्टेयर और वर्ष 1995-96 में 1.50 हेक्टेयर हो गया था।
- उच्च फसल पैदावार प्राप्त करने और कृषि उत्पादन में निरंतर वृद्धि के लिये बीज एक महत्त्वपूर्ण और बुनियादी कारक है। अच्छी गुणवत्ता वाले बीजों का उत्पादन करना जितना महत्त्वपूर्ण है, उतना ही महत्त्वपूर्ण है उन बीजों का वितरण करना किंतु दुर्भाग्यवश देश के अधिकतर किसानों तक उच्च गुणवत्ता वाले बीज पहुँच ही नहीं पाते हैं।
- भारत का कृषि क्षेत्र काफी हद तक मानसून पर निर्भर करता है, प्रत्येक वर्ष देश के करोड़ों किसान परिवार बारिश के लिये प्रार्थना करते हैं। प्रकृति पर अत्यधिक निर्भरता के कारण कभी-कभी किसानों को नुकसान का भी सामना करना पड़ता है, यदि अत्यधिक बारिश होती है तो भी फसलों को नुकसान पहुँचता है और यदि कम बारिश होती है तो भी फसलों को नुकसान पहुँचता है। इसके अतिरिक्त कृषि के संदर्भ में जलवायु परिवर्तन भी एक प्रमुख समस्या के रूप में सामने आया है और उनकी मौसम के पैटर्न को परिवर्तन करने में भी भूमिका अदा की है।
- भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि विपणन व्यवस्था गंभीर हालत में है। यथोचित विपणन सुविधाओं के अभाव में किसानों को अपने खेत की उपज को बेचने के लिये स्थानीय व्यापारियों और मध्यस्थों पर निर्भर रहना पड़ता है, जिससे उन्हें फसल का सही मूल्य प्राप्त हो पाता।

प्रभाव

- देश के कृषि क्षेत्र में विद्यमान विभिन्न चुनौतियों और समस्याओं के परिणामस्वरूप किसान परिवारों की आय में कमी होती है और वे ऋण के बोझ तले दबते चले जाते हैं। अंततः उनके समक्ष आत्महत्या करने के सिवाए कोई विकल्प नहीं बचता।
- निम्न और अत्यधिक जोखिम वाली कृषि आय कृषकों की रुचि पर हानिकारक प्रभाव डालती है और वे खेती को छोड़ने के लिये मज़बूर हो जाते हैं।
- कृषि उत्पादन में कमी का नकारात्मक प्रभाव विनिर्माण उद्योग पर भी पड़ता है क्योंकि कृषि क्षेत्र विनिर्माण उद्योग के लिये पर्याप्त मात्र में कच्चा माल उपलब्ध कराता है।
- इससे देश में खाद्य सुरक्षा और कृषि क्षेत्र के भविष्य पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

कृषि सुधार हेतु सरकारी प्रयास

- राष्ट्रीय कृषि मंडी स्कीम
  - राष्ट्रीय कृषि मंडी स्कीम (ई-नाम) के तहत बेहतर मूल्य खोज सुनिश्चित करके, पारदर्शिता और प्रतियोगिता के माध्यम से कृषि मंडियों में क्रांति लाने की एक नवाचारी मंडी प्रक्रिया प्रारंभ की गई।
- कृषि उपज और पशुधन विपणन (संवर्द्धन और सरलीकरण) अधिनियम, 2017
  - कृषि उपज और पशुधन विपणन (संवर्धन और सरलीकरण) अधिनियम, 2017 राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों द्वारा अपनाये जाने हेतु जारी किया गया। जिसमें ई-व्यापार, सब-यार्ड के रूप में गोदामों, शीत भंडारण की घोषणा, मंडी शुल्क एवं कमीशन प्रभार को तर्कसंगत बनाना तथा कृषि क्षेत्र में निजी मंडी जैसे सुधार शामिल हैं।
- पीएम-किसान योजना
  - प्रधानमंत्री किसान सम्मान निधि (PM-KISAN) योजना एक केंद्रीय क्षेत्रक योजना है जिसकी शुरुआत प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी द्वारा 24 फरवरी, 2019 को लघु एवं सीमांत किसानों को आर्थिक सहायता प्रदान करने के उद्देश्य से की गई थी।
  - इस योजना के तहत पात्र किसान परिवारों को प्रतिवर्ष 6,000 रुपए की दर से प्रत्यक्ष आय सहायता उपलब्ध कराई जाती है।
- पीएम- आशा योजना
  - सरकार की किसान अनुकूल पहलों को बढ़ावा देने के साथ-साथ अन्नदाता के प्रति अपनी जवाबदेही को ध्यान में रखते हुए केंद्रीय मंत्रिमंडल ने वर्ष 2018 में एक समग्र योजना 'प्रधानमंत्री अन्दाता आय संरक्षण अभियान' (Pradhan Mantri Annadata Aay SanraksHan Abhiyan- PM-AASHA) प्रारंभ की थी।

- नई समग्र योजना में किसानों के लिये उचित मूल्य सुनिश्चित करने की व्यवस्था शामिल है और इसके अंतर्गत आने वाले प्रमुख घटक निम्नलिखित हैं-
  - मूल्य समर्थन योजना (Price Support Scheme-PSS)
  - मूल्य न्यूनता भुगतान योजना (Price Deficiency Payment Scheme- PDPS)
  - निजी खरीद एवं स्टॉकिस्ट योजना (Private Procurement & Stockist Scheme- PPSS)

संभावित उपाय

- कृषि क्षेत्र समावेशी विकास के लिये एक महत्त्वपूर्ण खंड है और अर्थव्यवस्था को प्रोत्साहन प्रदान करता है, खासकर तब जब अर्थव्यवस्था अच्छा प्रदर्शन न कर रही हो।
- कृषि व्यय और विकास चालकों में असमानता के मुद्दे को संबोधित किया जाना चाहिये। पशुधन और मत्स्य पालन क्षेत्र में उच्च विकास के बावजूद भी इन क्षेत्रों पर किये जाने वाला व्यय अपेक्षाकृत काफी कम है। अत: पशुधन और मत्स्य पालन क्षेत्र के योगदान को देखते हुए आवश्यक है कि इन क्षेत्रों पर होने वाले व्यय में वृद्धि की जाए।
- कृषि में अनुसंधान और विकास पर खर्च को सकल घरेलू उत्पाद के लगभग 0.40 प्रतिशत से बढ़ाकर 1 प्रतिशत किया जाना चाहिये। कृषि अनुसंधान एवं विकास में नूतन प्रयोग करने की आवश्यकता है जिससे सूक्ष्म कृषि, उच्च पोषक और प्रसंस्करण किये जाने वाली किस्में, जलवायु प्रतिरोधक प्रौद्योगिकियाँ, कृत्रिम बुद्धिमत्ता आधारित कृषि और बाजार परामर्शों के लिये साइबर कृषि भौतिक प्रणालियाँ विकसित हो सके।
- कृषि पर भारत की निर्भरता और जलवायु-प्रेरित आपदाओं को देखते हुए देशभर में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद की 'क्लाइमेट स्मार्ट विलेज' (Climate Smart Villages) की अवधारणा के कार्यान्वयन का विस्तार किया जाना चाहिये।
- कृषि क्षेत्र से संबंधित आँकड़ों को एकत्र करने के लिये एक एजेंसी की स्थापना की जानी चाहिये। यह संस्था लाभार्थियों की पहचान, सब्सिडी के बेहतर लक्ष्यीकरण और नीति निर्माण में सहायक हो सकती है।
- भारतीय कृषि में आधुनिक उद्यमिता को अधिक से अधिक बढ़ावा देने के लिये कृषि स्टार्ट-अप्स प्रारंभ करने की आवश्यकता है। स्टार्ट-अप इंडिया योजना के तहत कृषिगत सेवाओं को बढ़ावा दिये जाने से जहाँ एक ओर किसानों को आधुनिक तकनीक अपनाने के संदर्भ में प्रोत्साहन प्राप्त होगा, वहीं इससे उनकी आय में वृद्धि भी होगी।
- किसी भी क्षेत्र में सुधारों से संबंधित कार्यवाही की ज़िम्मेदारी मुख्य रूप से सरकारों की ही होती है। ज्ञात हो कि कृषि एक राज्य सूची का विषय है इसलिये केंद्र की भूमिका सीमित है। लेकिन जिस प्रकार GST को लागू करने में केंद्र-राज्यों के मध्य अभूतपूर्व सहयोग देखा गया है। ऐसा ही सहयोग कृषि क्षेत्र में भी अपेक्षित है। कृषि क्षेत्र में भी एकीकृत परिषद का निर्माण करके कृषि से संबंधित समस्याओं का समाधान खोजा जा सकता है।

निष्कर्ष

विदित है कि भारत में एक बड़ी कृषक आबादी निवास करती है। यदि यह क्षेत्र समस्याग्रस्त बना रहेगा तो भारत में पहले से ही मौज़ूद आर्थिक असमानता में और भी वृद्धि होगी तथा समग्र मांग में भी कमी आ सकती है जिसके परिणामस्वरुप आर्थिक वृद्धि भी नकरात्मक रूप से प्रभावित हो सकती है। लेकिन इन सब के बावज़ूद भारत में कृषि क्षेत्र में सुधार के लिये सरकारों द्वारा गंभीर प्रयास देखने को नहीं मिले है। अतीत में भूमि सुधार अधिनियम इसका एक महत्त्वपूर्ण उदाहरण है। अब समय की मांग है कि सरकारें इस क्षेत्र को भी गंभीरता से लें तथा एक ऐसी व्यापक रणनीति के आधार पर सुधारों को लागू करने का प्रयास करें जिससे इस क्षेत्र में ढाँचागत परिवर्तन लाया जा सके।

व्यापार सुगमता रिपोर्ट: प्रमाणिकता पर प्रश्नचिन्ह

संदर्भ

हाल ही में विश्व बैंक ने वार्षिक प्रकाशन व्यापार सुगमता रिपोर्ट (Ease Of Doing Business) के प्रकाशित करने पर रोक लगा दिया है। विश्व बैंक को कुछ देशों द्वारा उपलब्ध कराए गए डेटा में अनियमितता की सूचना प्राप्त हुई थी। विश्व बैंक ने प्रेस विज्ञप्ति के माध्यम से

बताया कि उनके द्वारा पिछले पाँच वर्षों में व्यापार सुगमता रिपोर्ट के लिये उपलब्ध कराए गए संस्थागत डेटा की व्यवस्थित समीक्षा व मूल्यांकन का निर्णय लिया गया है। ध्यातव्य है कि भारत ने व्यापार को सुगम बनाने के लिये वर्ष 2014 में मेक इन इंडिया (Make in India) पहल की नींव रखी थी।

वैश्विक महामारी COVID-19 के बाद 'भारतीय उद्योग परिसंघ' (Confederation of Indian Industry-CII) ने भारत के व्यापार परिदृश्य को आसान बनाने के लिये प्रमुख क्षेत्रों में आवश्यक उपायों की पहचान की है ताकि आत्मनिर्भर भारत का निर्माण किया जा सके।

इस आलेख में व्यापार सुगमता सूचकांक, सूचकांक के मानक, भारत की स्थिति, व्यापार सुगमता रिपोर्ट में खामियाँ, चिली व रूस का उदाहरण तथा व्यापार सुगमता बढ़ाने हेतु भारत के प्रयासों पर विमर्श किया जाएगा।

व्यापार सुगमता सूचकांक से तात्पर्य

- विश्व बैंक द्वारा जारी व्यापार सुगमता सूचकांक (Ease Of Doing Business) किसी भी देश के व्यापार परिदृश्य की सुगमता को मापता है।
- व्यापार सुगमता सूचकांक में व्यवसाय शुरू करना, निर्माण परमिट, विद्युत, संपत्ति का पंजीकरण, ऋण उपलब्धता, अल्पसंख्यक निवेशकों की सुरक्षा, करों का भुगतान करना, सीमा-पार व्यापार, अनुबंध लागू करना, दिवालियापन होने पर समाधान आदि मानक शामिल हैं।

व्यापार सुगमता सूचकांक के निम्नलिखित मानक हैं-

- व्यवसाय शुरू करना (Starting A Business)
- निर्माण परमिट (Dealing with Construction Permits)
- विद्युत (Getting Electricity)
- संपत्ति का पंजीकरण (Registering Property)
- ऋण उपलब्धता (Getting Credit)
- अल्पसंख्यक निवेशकों की सुरक्षा (Protecting Minority Investors)
- करों का भुगतान करना (Paying Taxes)
- सीमाओं के पार व्यापार करना (Trading Across Borders)
- अनुबंध लागू करना (Enforcing Contract)
- दिवालियापन होने पर समाधान (Resolving Insolvency)
  - इसमें 11वाँ मानक श्रमिकों को नियुक्त करना (Employing Workers) है, लेकिन इसको स्कोर के अंतर्गत नहीं मापा जाता है।

भारत की वर्तमान स्थिति

- विश्व बैंक द्वारा जारी व्यापार सुगमता रिपोर्ट- 2020 में भारत 190 देशों में 63वें स्थान पर है। सरकार के निरंतर प्रयासों के परिणामस्वरूप भारत पिछले 5 वर्षों (वर्ष 2014-19) में 'व्यापार सुगमता सूचकांक' में अपनी रैंकिंग में 79 पायदानों का उल्लेखनीय सुधार करने में सफल रहा है।
- भारत ने व्यवसाय शुरू करने, निर्माण परमिट, सीमाओं के पार व्यापार और दिवालियापन का समाधान करने के मानकों में सुधार किया।

व्यापार सुगमता रिपोर्ट में कमियाँ: भारत के संदर्भ में

- विश्व बैंक के अनुसार, पिछले पाँच वर्षों के दौरान भारत ने व्यापार सुगमता सूचकांक में तीव्र वृद्धि दर्ज़ की है, परन्तु ज़मीनी स्तर पर विकास का अभाव नज़र आता है।
- भारत में विनिर्माण क्षेत्र सकल घरेलू उत्पाद के 16-17 प्रतिशत पर स्थिर है।
- वित्तीय वर्ष 2011-12 से 2017-18 के दौरान भारत में 3.5 मिलियन नौकरियाँ समाप्त हो गईं।
- भारत की आयात निर्भरता चीन के ऊपर लगातार बढ़ती जा रही है।

- व्यापार सुगमता सूचकांक में भारत की अच्छी रैंकिंग होने के बावजूद निवेश का प्रवाह अन्य कम रैंकिंग वाले देशों के सापेक्ष काफी कम है।
- शोधकर्ताओं का दावा है कि विश्व बैंक की मानक प्रक्रिया में बदलाव के कारण ही भारत की रैंकिंग में परिवर्तन हुआ है, जबकि भारत ने व्यापार सुगमता के लिये ज़मीनी स्तर पर विशेष कार्य नहीं किया है।

चिली व रूस का उदाहरण

- दक्षिण अमेरिकी देश चिली की व्यापार सुगमता सूचकांक में रैंकिंग लगातार गिर रही है, जो वर्ष 2014 में 34 के सापेक्ष वर्ष 2017 में 67 दर्ज़ की गई, बावजूद इसके चिली में निवेश और विनिर्माण क्षेत्र की मज़बूत स्थिति बनी हुई है।
- शोधकर्ताओं के अनुसार, विश्व बैंक की पुरातन मानक प्रक्रिया के आधार पर गणना करने पर चिली की व्यापार सुगमता सूचकांक रैंकिंग में कोई विशेष गिरावट नहीं होती।
- वर्ष 2012 में रूस की व्यापार सुगमता सूचकांक में रैंकिंग 120वें स्थान पर थी, परन्तु 6 वर्षों में ही रूस व्यापार सुगमता सूचकांक 20वें स्थान पर पहुँच गया है, इसके बावजूद रूस निवेश का आकर्षक स्थल नहीं बन पाया।

अन्य कमियाँ

- व्यापार सुगमता सूचकांक की सबसे बड़ी कमी यह है कि सूचकांक दिल्ली व मुंबई जैसे बड़े महानगरों की व्यापारिक स्थिति के अनुसार ही डेटा का संग्रहण करता है।
- व्यापार सुगमता सूचकांक अधिनियमों के व्यावहारिक क्रियान्वयन के बजाय अधिनियमों की उपस्थिति मात्र से रैंकिंग सुनिश्चित करता है।
- सूचकांक में न्यूनतम विनियमित श्रम बाज़ार वाले देशों को अच्छी रैंकिंग प्रदान की जाती है, इससे प्रभावित होकर महाराष्ट्र सरकार ने वर्ष 2016 में बॉयलर्स अधिनियम (Boilers Act), 1923 और इंडियन बॉयलर्स रेगुलेशन (Indian Boilers Regulation), 1950 में संशोधन कर दिया और तृतीय पक्ष के द्वारा निरीक्षण तथा नियोक्ताओं को स्वप्रमाणन का अधिकार दे दिया। बाद में निरीक्षण और स्वप्रमाणन होना बंद हो गया, जिसका अन्य राज्यों द्वारा भी अनुसरण किया गया। इस प्रकार मानकों में फेरबदल होने से व्यापार सुगमता सूचकांक में रैंकिंग भी प्रभावित हो जाती है।

व्यापार सुगमता बढ़ाने हेतु भारत के प्रयास

- देश के शीर्ष नेतृत्व सहित केंद्रीय स्तर के साथ-साथ राज्य स्तर पर भी व्यापार सुगमता सुधारों ने भारत की रैंकिंग को मज़बूत करने में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया।
- भारत में व्यवसाय शुरू करना अधिक आसान बनाया गया, साथ ही ऑनलाइन प्लेटफॉर्म का बेहतर प्रयोग किया गया।
- व्यावसायिक प्रमाणीकरण की प्रक्रिया को और सुव्यवस्थित किया, साथ ही निर्माण परमिट प्राप्त करने और निर्माण गुणवत्ता में लगने वाले समय को कम किया गया।
- भारत ने मेक इन इंडिया, स्टैंड अप इंडिया, मुद्रा योजना जैसी पहलें प्रारंभ की हैं जिनकी सहायता से लोगों द्वारा व्यापार करना और व्यापार के लिये पूंजी एकत्र करना आसान हो गया है।
- लघु और मध्यम उद्योगों की क्षमता को ठीक से पहचान कर इनमें वित्त के प्रवाह को बढ़ावा दिया जा रहा है, इसके लिये छोटे-छोटे क्लस्टर विकसित किये जा रहे हैं।
- हाल ही में भारत ने कॉर्पोरेट करों में कटौती की है जिसका उद्देश्य भारत में अर्थव्यवस्था को मज़बूत करना है। इस प्रकार के कदम से निवेश लागत कम होगी जिससे भारत में निवेश को बढ़ावा मिलेगा।

नवीन सुधारों की आवश्यकता

- स्व-प्रमाणन की व्यवस्था
  - सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यमों (Micro, small and medium enterprises- MSMEs) को विशेष मदद की ज़रूरत है। इन उद्यमों को तीन वर्ष के लिये मंज़ूरी तथा निरीक्षण आवश्यकताओं से छूट दी जानी चाहिये।
  - अच्छा ट्रैक रिकॉर्ड रखने वाले MSMEs के लिये स्व-प्रमाणन मार्ग का उपयोग किया जा सकता है।

- सिंगल विंडो क्लीयरेंस
  - उत्पादों के आयात-निर्यात प्रक्रिया संबंधी जानकारी के लिये विभिन्न मंत्रालयों की वेबसाइटों पर अनेक अधिसूचनाएँ हैं, परंतु वैश्विक आपूर्तिकर्त्ताओं को इनसे अनेक परेशानियों का सामना करना पड़ता है।
  - इस समस्या को दूर करने के लिये ऑनलाइन एकल विंडो प्रणाली बनाने की आवश्यकता पर बल दिया जाना चाहिये।
- संपत्ति पंजीकरण तथा भूमि अधिग्रहण कानून
  - संपत्ति पंजीकरण प्रक्रिया को आसान बनाने की आवश्यकता है तथा उद्योगों को किसानों से सीधे भूमि खरीदने की अनुमति दी जानी चाहिये।
- व्यावसायिक विवाद समाधान प्रक्रिया
  - भारत में पर्याप्त व्यावसायिक न्यायालयों तथा बुनियादी ढाँचे के अभाव के कारण अनुबंधों को लागू करना एक चुनौती है। अत: न्यायालयों में प्रमुख डिजिटल सुधारों जैसे कि आभाषी न्यायिक कार्यवाही, ई-फाइलिंग, घर से कार्य करना आदि को लागू किया जाना चाहिये।
  - वैकल्पिक विवाद समाधान संस्थानों (Alternative Dispute Resolution Institution) को स्थापित करने के साथ ही मध्यस्थता तथा सुलह केंद्रों का विस्तार किया जाना चाहिये।

लॉजिस्टिक सुधारों की आवश्यकता

- भारत में लॉजिस्टिक लागत अधिक होने के कारण व्यावसायिक प्रतिस्पर्द्धा प्रभावित होती है। लॉजिस्टिक लागत में कमी लाने के लिये मध्यम अवधि की कार्रवाई पर बल देने की आवश्यकता है। इसके लिये निम्नलिखित कदम उठाए जा सकते हैं-
  - रेलवे एवं जलमार्ग की परिवहन में हिस्सेदारी बढ़ाना
  - प्रथम-मील तथा अंतिम-मील कनेक्टिविटी (first-mile and last-mile connectivity) में सुधार करना
  - बंदरगाह पर वाहनों को माल के लोडिंग तथा अनलोडिंग के समय को कम करना

निष्कर्ष

- वैश्विक सूचकांको की मानक प्रक्रिया का स्तरीकरण होना अति आवश्यक है। इस समय भारत को आत्म मंथन करने की आवश्यकता है कि आखिर क्यों सूचकांक की रैंकिंग में वृद्धि के बावजूद भारत आधारभूत स्तर पर निवेश को आकर्षित करने और विनिर्माण क्षेत्र को बढ़ावा देने में विफल रहा है। भारतीय अर्थव्यवस्था में विद्यमान समस्याओं का संधारणीय समाधान निकाला जाना चाहिये। व्यापार सुगमता सूचकांक में भारत की स्थिति में सुधार से न केवल बाहरी निवेश बढ़ेगा अपितु घरेलू उद्यमों को भी आत्मनिर्भर बनने में मदद मिलेगी।

अंतर्राष्ट्रीय घटनाक्रम

इज़राइल-यूएई समझौता: कारण और प्रभाव

संदर्भ

हाल ही में इज़राइल और संयुक्त अरब अमीरात ने ऐतिहासिक 'द अब्राहम एकॉर्ड (The Abraham Accord)' (Washington-brokered Deal) के तहत पूर्ण राजनयिक संबंध स्थापित करने के लिये सहमति व्यक्त की है। ऐसी घोषणा करने वाला यूएई खाड़ी क्षेत्र का प्रथम तथा तीसरा अरब देश है जिसके इज़राइल के साथ सक्रिय राजनयिक संबंध हैं। इससे पूर्व मिस्र ने वर्ष 1979 में तथा जॉर्डन ने वर्ष 1994 में इज़राइल के साथ 'शांति समझौते' किये थे। संयुक्त अरब अमीरात और इज़राइल दोनों पश्चिम एशिया में संयुक्त राज्य अमेरिका के सहयोगी देश हैं।

इस आलेख में इज़राइल और संयुक्त अरब अमीरात शांति समझौता, समझौते की पृष्ठभूमि, वैश्विक प्रतिक्रिया, फिलिस्तीन और ईरान का मुद्दा तथा भारत के हितों पर विचार-विमर्श किया जाएगा।

इज़राइल-यूएई शांति समझौता

- 'द अब्राहम एकॉर्ड (The Abraham Accord)' जिसे 'इज़राइल-यूएई शांति समझौता' (Israel-UAE Peace Deal) के रूप में भी जाना जाता है, यह इज़राइल द्वारा फिलिस्तीनी क्षेत्रों को अपने हिस्सों में को जोड़ने की योजना को 'निलंबित' कर देगा।
- समझौते के तहत इज़राइल, वेस्ट बैंक के बड़े हिस्से पर अधिग्रहण करने की अपनी योजना को निलंबित कर देगा।
- वेस्ट बैंक, इज़राइल और जॉर्डन के बीच स्थित है। इसका एक प्रमुख शहर फिलिस्तीन की वास्तविक प्रशासनिक राजधानी 'रामल्लाह' (Ramallah) है।
- इज़राइल ने छह-दिवसीय अरब-इज़राइली युद्ध-1967 में इसे अपने नियंत्रण में ले लिया था और बाद के वर्षों में वहाँ बस्तियाँ स्थापित की हैं।
- संयुक्त राज्य अमेरिका, संयुक्त अरब अमीरात और इज़राइल द्वारा एक संयुक्त बयान जारी किया गया है जिसमें कहा गया है कि आने वाले हफ्तों में प्रतिनिधिमंडल सीधी उड़ानों, सुरक्षा, दूरसंचार, ऊर्जा, पर्यटन और स्वास्थ्य देखभाल के सौदों पर हस्ताक्षर करेंगे।

समझौते के कारण

- वर्ष 1971 से संयुक्त अरब अमीरात फिलिस्तीनियों की भूमि पर इज़राइल के नियंत्रण को मान्यता नहीं देता था।
- हाल के वर्षों में ईरान के साथ साझा दुश्मनी और लेबनान के आतंकवादी समूह हिज़्बुल्लाह के कारण खाड़ी अरब देशों और इज़राइल के बीच निकटता आ गई है।
- आतंकवादी समूह 'मुस्लिम ब्रदरहुड' और 'हमास' के कारण भी दोनों देशों के बीच निकटता बढ़ी है।
- इस समझौते में अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही जिन्होंने इज़राइल और यूएई की कई गुप्त वार्ताओं की पृष्ठभूमि तैयार की।

अरब-इज़राइल के लिये महत्त्वपूर्ण है समझौता

- यह एक ऐतिहासिक समझौता है जो यूएई-इज़रायल के साथ राजनयिक संबंध स्थापित करने के मामले में तीसरा अरब देश और खाड़ी क्षेत्र में पहला देश है। अरब-इज़राइल संबंध पूर्व में ऐतिहासिक रूप से संघर्ष-ग्रस्त रहे हैं।
- वर्ष 1948 में यहूदियों ने स्वतंत्र इज़राइल की घोषणा कर दी और इज़राइल एक देश बन गया, इसके परिणामस्वरूप आस-पास के अरब राज्यों (इजिप्ट, जॉर्डन, इराक और सीरिया) ने इज़राइल पर आक्रमण कर दिया। युद्ध के अंत में इज़राइल ने संयुक्त राष्ट्र की विभाजन योजना के आदेशानुसार प्राप्त भूमि से भी अधिक भूमि पर अपना नियंत्रण स्थापित कर लिया।

- इसके पश्चात् दोनों देशों के मध्य संघर्ष तेज़ होने लगा और वर्ष 1967 में प्रसिद्ध 'सिक्स डे वॉर' (Six-Day War) हुआ, जिसमें इज़राइली सेना ने गोलन हाइट्स, सिनाई प्रायद्वीप वेस्ट बैंक तथा पूर्वी येरुशलम को भी अपने अधिकार क्षेत्र में कर लिया।
- इसके बाद अरब देशों ने खार्तूम में बुलाई बैठक में 'तीन नकारात्मक सिद्धांत (Three Nos)' का प्रस्ताव पेश किया जिसके अंतर्गत 'इज़राइल के साथ कोई शांति नहीं, इज़राइल के साथ कोई वार्ता नहीं और इज़राइल को किसी प्रकार की मान्यता नहीं' का प्रावधान था।
  - परन्तु यह सिद्धांत लंबे समय तक नहीं चला और वर्ष 1979 में मिस्र ने तथा जॉर्डन ने वर्ष 1994 में इज़राइल के साथ शांति समझौते कर लिया।
- अरब देशों और इज़राइल के बीच पुरानी शत्रुता अब समाप्त हो रही है। सऊदी अरब और यूएई जैसे सुन्नी जनसंख्या वाले अरब देशों ने पिछले कई वर्षों से इज़राइल के साथ संपर्क स्थापित किया है।
- अरब देश इस तथ्य को समझ रहे हैं कि संयुक्त राज्य अमेरिका अब उनकी सैन्य व वित्तीय सहायता करने में अपने हाथ पीछे खींच रहा है, ऐसे में ईरान की बढ़ती शक्ति का मुकाबला करने के लिये इज़राइल के साथ संबंधों को मज़बूत करना पड़ेगा।

वैश्विक प्रतिक्रिया

- इज़राइल
  - प्रस्तावित समझौता, वेस्ट बैंक के अलावा अन्य क्षेत्रों में फिलिस्तीनियों को सीमित स्वायत्तता प्रदान करते हुए इज़राइल के वेस्ट बैंक के बड़े हिस्से पर कब्जा करने की अपनी योजना को निलंबित कर देगा।
  - यह घोषणा इज़राइल के अरब देशों के साथ संबंधों की निकटता को सार्वजनिक रूप से स्वीकार करती है।
  - यह समझौता इज़राइल के प्रधानमंत्री बेंजामिन नेतन्याहू को एक ऐसे समय में राजनीतिक रूप से मदद कर सकता है जब इज़राइल की गठबंधन सरकार को अनेक चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है।
- फिलिस्तीन
  - फिलिस्तीनी इस्लामी राजनीतिक संगठन 'हमास' ने घोषणा को यह कहते हुए नकार दिया है कि यह सौदा फिलिस्तीनीयों के हित में नहीं है।
  - फिलिस्तीन स्वतंत्रता संघर्ष, अरब राष्ट्रों के विश्वास तथा सहयोग पर आधारित था। प्रस्तावित समझौते को फिलिस्तीन के लिये एक जीत और हार दोनों के रूप में चिह्नित किया जा रहा है।
- संयुक्त राज्य अमेरिका
  - समझौते को नवंबर में संयुक्त राज्य अमेरिका में होने वाले चुनाव से पहले राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप की एक राजनयिक जीत के रूप में माना जा रहा है।
  - हालाँकि राजनीतिक विशेषज्ञों का मानना है कि डोनाल्ड ट्रंप के प्रयास न तो अफगानिस्तान में युद्ध को समाप्त करने में और न ही इज़राइल और फिलिस्तीनियों के बीच शांति लाने में अभी तक सफल रहे हैं।
- संयुक्त अरब अमीरात
  - वाशिंगटन में यूएई के राजदूत ने कहा कि इज़राइल के साथ ऐतिहासिक शांति समझौता कूटनीतिक जीत है और इसे अरब-इज़राइल संबंधों में एक महत्त्वपूर्ण अग्रिम के रूप में माना जाना चाहिये।
- भारत
  - भारत ने शांति समझौते का स्वागत किया है। रणनीतिक विशेषज्ञों के अनुसार, इज़राइल और संयुक्त अरब अमीरात दोनों ही भारत के बेहद करीबी मित्र देश हैं। ऐसे में भविष्य में इस्लामिक देशों के संगठन ऑर्गनाइज़ेशन ऑफ इस्लामिक को-ऑपरेशन (Organisation of Islamic Cooperation-OIC) में कश्मीर का मुद्दा हमेशा के लिये समाप्त हो सकता है।
- तुर्की
  - तुर्की ने इसे फिलिस्तीनी समुदाय को धोखा देने वाला समझौता बताया है। तुर्की ने संयुक्त अरब अमीरात के साथ अपने राजनायिक संबंधों को तोड़ने की बात कही है। तुर्की आने समय में अपने राजदूत एवं अन्य अधिकारियों को संयुक्त अरब अमीरात से वापस बुलाने पर विचार कर सकता है।

फिलीस्तीन की समस्या

- ईरान से संबंधित चिंताओं के चलते अब इन दोनों देशों के बीच अनौपचारिक संपर्क की शुरुआत हो गई है। इस समझौते पर फिलिस्तीन का शीर्ष नेतृत्व काफी हैरान है।
- फिलिस्तीन के राष्ट्रपति महमूद अब्बास के प्रवक्ता ने इस समझौते को 'सौदा' करार दिया है और कहा है कि यह राजद्रोह से कम नहीं है। फिलिस्तीन सरकार ने यूएई से अपने राजदूत को भी वापस बुला लिया है। वहीं, ईरान ने भी इज़राइल और यूएई के बीच इस समझौते को शर्मनाक बताया है।
- इज़राइल और संयुक्त अरब अमीरात को भले ही इस समझौते से अभी या देर में लाभ मिलने की संभावना हो लेकिन इस समझौते ने फिलिस्तीन को एक बार फिर हाशिये पर रख दिया गया है।
- यह समझौता फिलिस्तीन के मुद्दे को हल करने की व्यापक शांति योजना से कहीं दूर है। नेतन्याहू को जहाँ इससे आम चुनाव में लाभ मिल सकता है वहीं यूएई के लिये इसमें तात्कालिक लाभ नहीं दिख रहे हैं।

अन्य चुनौतियाँ

- रक्षा क्षेत्र के विशेषज्ञों के अनुसार, इस समझौते के कारन इस्लामिक दुनिया में भी मतभेद उभर कर सामने आ गए हैं। इस्लामिक सहयोग संगठन में पाकिस्तान, मलेशिया एवं तुर्की पहले से ही नये संगठन के निर्माण की बात करते आए हैं वहीं अब इस मुद्दे पर एर्दोगन (तुर्की के राष्ट्रपति) ने एक ऐसे समूह/संगठन की आवश्यकता की बात कहा जो फिलिस्तीनी समुदाय के लिये संघर्ष कर सके।
- इस समझौते के बाद ईरान को इज़राइल की सेना के उसकी सीमा तक आने का डर सता रहा है। यह कहीं न कहीं अरब जगत के दूसरे देशों के लिये सुरक्षा की गारंटी भी होगी क्योंकि सभी अरब देश ईरान की बढ़ती शक्ति से चिंतित हैं।
- सेंटर फॉर वेस्ट एशियन स्टडीज के प्रोफेसर के अनुसार, इसे ऐतिहासिक समझौता नहीं कहा जा सकता है क्योंकि इज़राइल ने इससे पहले भी जो चार समझौते (1979, 1983, 1993, 1994) किये थे उन्हें भी ऐतिहासिक बताया गया था लेकिन इससे कोई शांति स्थापित नहीं हो पाई थी क्योंकि यह अलग-अलग देशों द्वारा किये गए थे और इसमें क्षेत्रीय सहमति शामिल नहीं थी।

निष्कर्ष

- यह समझौता मध्य पूर्व में शांति के लिये एक ऐतिहासिक और महत्त्वपूर्ण कदम है। मध्य-पूर्व को दो सबसे प्रगतिशील और उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के बीच प्रत्यक्ष संबंध शुरू होने से आर्थिक विकास के साथ ही लोगों-से-लोगों के संबंधों
- को आगे बढ़ाने में मदद मिलेगी। भारत के संयुक्त अरब अमीरात एवं इज़राइल दोनों देशों के साथ बेहतर हैं इसलिये भारत के साथ उनके संबंध अच्छे बने रहेंगे लेकिन फिलिस्तीन को लेकर भारत की नीति में अस्पष्टता आ सकती है, जिस पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है।

नोट :

पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी

अपशिष्ट प्रबंधनः पाँच सूत्रीय कार्य-योजना की आवश्यकता

संदर्भ

वर्षों की उपेक्षा, दूरदर्शिता की कमी और शहरी नियोजन की पूर्ण अनुपस्थिति ने भारत को अपशिष्ट लैंडफिल, अपशिष्ट-चोक नालियों, जल निकायों और नदियों को अपशिष्ट के ढेर में बदल दिया है। पूरे भारत में लगभग 48 मान्यता प्राप्त लैंडफिल हैं, जिसने लगभग 5,000 एकड़ भूमि को कवर किया हुआ है, जिसका कुल भूमि मूल्य लगभग 100,000 करोड़ रुपये है। भारत में प्रति वर्ष लगभग 275 मिलियन टन अपशिष्ट उत्पन्न होता है। लगभग 20-25 प्रतिशत की वर्तमान अपशिष्ट उपचार दर के साथ इस अपशिष्ट का अधिकांश हिस्सा अनुपचारित रहता है।

वस्तुतः भारत में राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय अनुभवों व निष्कर्षों के आधार पर एक ऐसे धारणीय तंत्र के निर्माण की कवायद चल रही है जहाँ आम व्यक्ति, उद्योग एवं सरकार तीनों के हितों को ध्यान में रखते हुए संपूर्ण पारिस्थितिकी तंत्र की रक्षा की जा सके। अतः मूल लक्ष्य एक धारणीय व अनुक्रियाशील प्रबंधन तंत्र को विकसित करना है जो अपशिष्ट निर्माण, संग्रहण एवं निस्तारण में सभी पक्षकारों की भूमिका तय करते हुए उनके कर्त्तव्यों व ज़िम्मेदारियों को परिभाषित कर एक सक्षम व अनुक्रियाशील तंत्र का निर्माण करे।

भारत में अपशिष्ट प्रबंधन तंत्र के कार्यकरण में पाँच सूत्रीय कार्य-योजना (वहनीय तकनीक, त्वरित खरीद, नई नीति, कुशल मानव संसाधन, शून्य अपशिष्ट समाज) को अपनाने की आवश्यकता है। इस आलेख में अपशिष्ट प्रबंधन, अपशिष्ट के प्रकार, भारत में ठोस अपशिष्ट प्रबंधन की स्थिति, अपशिष्ट प्रबंधन के उदाहरण तथा पाँच सूत्रीय कार्य-योजना के बारे में विचार-विमर्श किया जाएगा।

अपशिष्ट क्या है?

- शहरीकरण, औद्योगीकरण और जनसंख्या में विस्फोट के साथ ठोस अपशिष्ट प्रबंधन 21वीं सदी में राज्य सरकारों तथा स्थानीय नगर निकायों के लिये एक महत्त्वपूर्ण चुनौती बन गई है।
- विशेषज्ञों के अनुसार, अपशिष्ट का आशय हमारे प्रयोग के पश्चात् शेष बचे हुए अनुपयोगी पदार्थ से होता है। यदि शाब्दिक अर्थ की बात करें तो अपशिष्ट 'अवांछित' और 'अनुपयोगी सामग्री' को इंगित करता है।

अपशिष्ट के विभिन्न प्रकार

- ठोस अपशिष्ट (Solid Waste): ठोस अपशिष्ट के तहत घरों, कारखानों या अस्पतालों से निकलने वाला अपशिष्ट शामिल किया जाता है।
- तरल अपशिष्ट (Wet Waste): अपशिष्ट जल संयंत्रों और घरों आदि से आने वाला कोई भी द्रव आधारित अपशिष्ट को तरल अपशिष्ट के तहत वर्गीकृत किया जाता है।
- सूखा अपशिष्ट (Dry waste): अपशिष्ट जो किसी भी रूप में तरल या द्रव नहीं होता है, सूखे अपशिष्ट के अंतर्गत आता है।
- बायोडिग्रेडेबल अपशिष्ट (Biodegradable Waste): कोई भी कार्बनिक द्रव्य जिसे मिट्टी में जीवों द्वारा कार्बन-डाइऑक्साइड, पानी और मीथेन में संश्लेषित किया जा सकता है।
- नॉनबायोडिग्रेडेबल अपशिष्ट (Nonbiodegradable Waste:): कोई कार्बनिक द्रव्य जिसे कार्बन-डाइऑक्साइड, पानी और मीथेन में संश्लेषित नहीं किया जा सकता।

अपशिष्ट प्रबंधन से तात्पर्य

- अपशिष्ट प्रबंधन से तात्पर्य उस संपूर्ण श्रृंखला से है जिसके अंतर्गत अपशिष्ट के निर्माण से लेकर उसके संग्रहण (Collection) व परिवहन (Transport) के साथ प्रसंस्करण (Processing) एवं निस्तारण (Disposal) तक की संपूर्ण प्रक्रिया को शामिल किया जाता है।

- उक्त प्रबंधन तंत्र के अंतर्गत विभिन्न चरणों यथा संग्रहण (Collection), परिवहन (Transport), उपचार (Treatment) और निगरानी (Monitoring) के साथ निस्तारण को भी शामिल किया जाता है।
- अपशिष्ट पदानुक्रम तीन- आर (3-r's) का अनुसरण करता है- जो न्यूनीकरण (reduce), पुन: उपयोग (Reuse) और पुनर्चक्रण (Recycle) के रूप में संदर्भित किये जाते हैं। ये तीनों R अपशिष्ट प्रबंधन रणनीति को अपशिष्ट न्यूनीकरण के संदर्भ में उनकी वांछनीयता के अनुसार वर्गीकृत करते हैं।

अपशिष्ट प्रबंधन की प्रचलित विधियाँ

- लैंडफिल (Landfill): यह वर्तमान में अपशिष्ट प्रबंधन हेतु प्रयोग होने वाली सबसे प्रचलित विधि है। इस विधि में शहरों के आसपास के खाली स्थानों में अपशिष्ट को एकत्रित किया जाता है। ऐसा करते हुए यह ध्यान रखा जाता है कि वह क्षेत्र जहाँ अपशिष्ट एकत्रित किया जा रहा है, मिट्टी से ढका हो ताकि संदूषण (Contamination) से बचाव किया जा सके। जानकारों का मानना है कि यदि इस विधि को सही ढंग से डिज़ाइन किया जाए तो यह किफायती साबित हो सकती है।
- इंसीनरेशन (Incineration): इस विधि में अपशिष्ट को उच्च तापमान पर तब तक जलाया जाता है जब तक वह राख में न बदल जाए। अपशिष्ट प्रबंधन की विधि को व्यक्तिगत, नगरपालिका और संस्थानों के स्तर पर किया जा सकता है। इस विधि की सबसे अच्छी बात यह है कि यह अपशिष्ट की मात्रा को 20-30 प्रतिशत तक कम कर देता है। हालाँकि यह विधि अपेक्षाकृत काफी महँगी मानी जाती है।
- यरोलिसिस (Pyrolysis): अपशिष्ट प्रबंधन की इस विधि के अंतर्गत ठोस अपशिष्ट को ऑक्सीजन की उपस्थिति के बिना रासायनिक रूप से विघटित किया जाता है।

चुनौतियाँ

- भारत में अधिकांश शहरी स्थानीय निकाय वित्त, बुनियादी ढाँचे और प्रौद्योगिकी की कमी के कारण कुशल अपशिष्ट प्रबंधन सेवाएँ प्रदान करने के लिये संघर्ष करते हैं।
- शहरीकरण में तीव्रता के साथ ही ठोस अपशिष्ट उत्पादन में भी वृद्धि हुई है जिसने ठोस अपशिष्ट प्रबंधन को काफी हद तक बाधित किया है।
- हालाँकि ठोस अपशिष्ट प्रबंधन नियम-2016 में अपशिष्ट के अलगाव को अनिवार्य किया गया है, परंतु अक्सर बड़े पैमाने पर इस नियम का पालन नहीं किया जाता है।
- अधिकांश नगरपालिकाएँ बिना किसी विशेष उपचार के ही ठोस अपशिष्ट को खुले डंप स्थलों पर एकत्रित करती हैं। अक्सर इस प्रकार के स्थलों से काफी बड़े पैमाने पर रोगों के जीवाणु पैदा होते हैं और आस-पास रहने वाले रोग भी इससे काफी प्रभावित होते हैं। इस प्रकार के स्थलों से जो दूषित रसायन भूजल में मिलता है वह आम लोगों के जन-जीवन को काफी नुकसान पहुँचाता है।
- कई विशेषज्ञ इन स्थलों को वायु प्रदूषण के लिये भी ज़िम्मेदार मानते हैं।
- एक अन्य समस्या यह है कि अपशिष्ट प्रबंधन के लिये जो वित्त आवंटित किया जाता है उसका अधिकांश हिस्सा संग्रहण और परिवहन को मिलता है, वहीं प्रसंस्करण तथा निपटान हेतु बहुत कम हिस्सा बचता है।
- भारत में अपशिष्ट प्रबंधन क्षेत्र का गठन मुख्यत: अनौपचारिक श्रमिकों द्वारा किया जाता है जिनमें से अधिकांश शहरों में रहने वाले गरीब होते हैं। अनौपचारिक श्रमिक होने के कारण इन लोगों को कार्यात्मक और सामाजिक सुरक्षा नहीं मिल पाती है।

प्रभाव

- यदि अपशिष्ट का उचित प्रबंधन न किया जाए तो ये समुद्री और तटीय जैसे विशिष्ट पारिस्थितिकी तंत्रों को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करता हैं। समुद्री अपशिष्ट को बीते कुछ वर्षों से एक गंभीर चिंता के रूप में देखा जा रहा है। इससे न केवल समुद्री पारिस्थितिकी तंत्र की उत्पादकता पर प्रभाव पड़ता है, बल्कि इससे कई समुद्री प्रजातियों का जीवन भी प्रभावित होता है।
- प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष दोनों रूपों से अपशिष्ट हमारे स्वास्थ्य एवं कल्याण को भी कई तरह से प्रभावित करता है। जैसे- मीथेन गैस जलवायु परिवर्तन में योगदान करती है, स्वच्छ जल स्रोत दूषित हो जाते हैं।
- अपशिष्ट से न केवल पारिस्थितिकी तंत्र और स्वास्थ्य पर प्रभाव पड़ता है, बल्कि यह समाज पर आर्थिक बोझ को भी बढ़ाता है। इसके अलावा अपशिष्ट प्रबंधन में भी काफी धन खर्च होता है।

नोट :

- विश्व स्वास्थ्य संगठन (World Health Organization-WHO) के अनुसार, भारत में ठोस अपशिष्ट प्रबंधन में सुधार करके 22 प्रकार की बीमारियों को नियंत्रित किया जा सकता है।

अपशिष्ट प्रबंधन हेतु वैधानिक प्रयास

- ठोस अपशिष्ट प्रबंधन नियम-2016 (Solid Waste Management Rules, 2016)
  - नियमों के अनुसार, प्रदूषणकर्त्ता संपूर्ण अपशिष्ट को तीन प्रकारों यथा जैव निम्नीकरणीय, गैर-जैव निम्नीकरणीय एवं घरेलू खतरनाक अपशिष्टों के रूप में वर्गीकृत करके इन्हें अलग-अलग डिब्बों में रखकर स्थानीय निकाय द्वारा निर्धारित अपशिष्ट संग्रहकर्त्ता को ही देंगे।
  - इसके साथ ही स्थानीय निकायों द्वारा निर्धारित प्रयोग शुल्क का भुगतान प्रदूषणकर्त्ता द्वारा किया जाएगा। ये शुल्क स्थानीय निकायों द्वारा निर्मित विनियमों से निर्धारित किये जाएंगे।
  - इस नियम के अंतर्गत विभिन्न पक्षकारों यथा– भारत सरकार के विभिन मंत्रालयों जैसे पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय, शहरी विकास मंत्रालय, रसायन एवं उर्वरक मंत्रालय, कृषि एवं कृषक कल्याण मंत्रालय, ज़िला मजिस्ट्रेट, ग्राम पंचायत, स्थानीय निकाय, राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड आदि के कर्तव्यों का उल्लेख भी किया गया है।
- कंस्ट्रक्शन एवं डेमोलिशन अपशिष्ट प्रबंधन नियम
  - ये नियम भवन निर्माण व उससे संबंधित सभी गतिविधियों पर लागू होते हैं, जहाँ से अपशिष्ट निर्माण होता है।
  - इस नियम के अंतर्गत ये प्रावधान हैं कि जो अपशिष्ट उत्पादनकर्त्ता 20 टन प्रतिदिन व 300 टन प्रति महीने समान या उससे अधिक अपशिष्ट का निर्माण करेगा, उसे प्रत्येक निर्माण व तोड़-फोड़ के लिये स्थानीय निकाय से उपयुक्त स्वीकृति प्राप्त करनी होगी।
- ई-कचरा प्रबंधन नियम
  - ई-कचरा प्रबंधन नियम (E-waste Management Rules), 2016 अक्तूबर 2016 से प्रभाव में आया है।
  - ये नियम प्रत्येक निर्माता, उत्पादनकर्त्ता, उपभोक्ता, विक्रेता, अपशिष्ट संग्रहकर्त्ता, उपचारकर्त्ता व उपयोग- कर्त्ताओं आदि सभी पर लागू होता है।
  - अनौपचारिक क्षेत्र के श्रमिकों को औपचारिक रूप दिया जाएगा और श्रमिकों को ई-कचरे के प्रबंधन हेतु प्रशिक्षित किया जाएगा।

पाँच सूत्रीय कार्य-योजना

वर्तमान में अपशिष्ट प्रबंधन के लिये राष्ट्रीय मिशन के रूप में कार्य करने की आवश्यकता है। विशेषज्ञों ने इसके लिये पाँच सूत्रीय कार्य-योजना प्रस्तुत की है, जो इस प्रकार है-

- वहनीय तकनीक: सर्वप्रथम नगरपालिकाओं को वहनीय तकनीक तक पहुँच सुनिश्चित करने की आवश्यकता है जो कि भारतीय परिस्थितियों के अनुकूल हो। वर्तमान में अपशिष्ट प्रबंधन के लिये आवश्यक अधिकांश प्रौद्योगिकी/उपकरण आयातित, महंगे हैं और अक्सर हमारी विभिन्न स्थानीय स्थितियों में अनुकूल नहीं होते हैं। भारत को अपनी जटिल शहरी संरचना के लिये सस्ती, विकेंद्रीकृत, अनुकूलित समाधान की आवश्यकता है। उदाहरण के लिये जल निकायों को साफ़ करने के लिये रोबोट्स का प्रयोग किया जा सकता है।
- त्वरित खरीद प्रक्रिया: अपशिष्ट प्रबंधन में तकनीकी उन्नयन हेतु त्वरित खरीद प्रक्रिया को अपनाने की आवश्यकता है। लंबी प्रशासनिक प्रक्रिया के कारण प्रौद्योगिकी और उपकरणों की खरीद में अत्यधिक समय लग जाता है। बंबई नगरपालिका को उर्जा संयंत्र के अपशिष्ट प्रबंधन के लिये आवश्यक उपकरणों की खरीद करने में लगभग सात वर्ष का समय लग गया था।
- एकीकृत नीति: अपशिष्ट प्रबंधन हेतु एक एकीकृत नीति की आवश्यकता है। जिससे अपशिष्ट के विभिन्न प्रकारों का निस्तारण करने में सहूलियत होगी। इसके माध्यम से हजारों एकड़ भूमि लैंडफिल से मुक्त कराई जा सकती है।
- कुशल मानव संसाधन: अपशिष्ट प्रबंधन संयंत्रों के संग्रह, संचालन, रखरखाव और अपशिष्ट प्रबंधन श्रृंखला को संचालित करने तथा बनाए रखने के लिये कुशल और प्रशिक्षित पेशेवर कर्मियों की नियुक्ति पर ध्यान देना होगा।
- शून्य अपशिष्ट समाज: भारत पारंपरिक रूप से एक ऐसा समाज है जहाँ वस्तुओं की बर्बादी बहुत कम है और सब कुछ पुन: उपयोग और पुनर्नवीनीकरण किया जा सकता है। हमें ऐसे समाज के विकास को बढ़ावा देने की ज़रुरत है।

नोट :

आगे की राह

- देश को एक व्यापक अपशिष्ट प्रबंधन नीति की आवश्यकता है जो विकेंद्रीकृत अपशिष्ट निपटान प्रथाओं की आवश्यकता पर बल देती है ताकि इस क्षेत्र में निजी प्रतिभागियों को हिस्सा लेने का प्रोत्साहन मिल सके।
- अपशिष्ट प्रबंधन प्रणाली को सुदृढ़ करने के लिये अनुसंधान और विकास को प्रोत्साहित करने की आवश्यकता है। नीति निर्माण के समय हमारा ध्यान और अधिक लैंडफिल के निर्माण के बजाय पुनर्चक्रण तथा पुनर्प्राप्ति पर होना चाहिये।

दृष्टि The Vision

नोट :

सामाजिक न्याय

सार्वभौमिक विवाह योग्य आयु का निर्धारण

संदर्भ

स्वतंत्रता दिवस के उपलक्ष्य पर लालकिले की प्राचीर से प्रधानमंत्री ने घोषणा की थी कि सरकार महिलाओं के लिये विवाह की न्यूनतम आयु बढ़ाने पर विचार कर रही है, जो वर्तमान में 18 वर्ष निर्धारित है। प्रधानमंत्री ने कहा कि महिलाओं के लिये विवाह की न्यूनतम आयु सीमा पर पुनर्विचार करने हेतु एक समिति का भी गठन किया गया है। केंद्र सरकार समिति द्वारा रिपोर्ट प्रस्तुत करने के पश्चात् इस विषय पर निर्णय लेगी।

भारत में विवाह की न्यूनतम आयु खासकर महिलाओं के लिये विवाह की न्यूनतम आयु सदैव एक विवादास्पद विषय रहा है, और जब भी इस प्रकार के नियमों में परिवर्तन की बात की गई है तो सामाजिक और धार्मिक रुढ़िवादियों का कड़ा प्रतिरोध देखने को मिला है। यह समिति महिलाओं के लिये विवाह योग्य न्यूनतम आयु की समीक्षा करने के साथ ही मातृत्व स्वास्थ्य पर इसके निहितार्थों का अध्ययन करेगा तथा अपनी सिफारिशें सरकार को प्रस्तुत करेगा। बज़ट भाषण के दौरान वित्तमंत्री ने सार्वभौमिक विवाह योग्य आयु के विषय पर चर्चा करते हुए कहा कि वर्ष 1978 में पूर्ववर्ती शारदा अधिनियम द्वारा निर्धारित विवाह योग्य आयु को 14 वर्ष से बढ़ाकर 18 वर्ष कर दिया गया था। जून, 2020 को केंद्रीय महिला एवं बाल विकास मंत्रालय ने मातृत्त्व की आयु, मातृ मृत्यु दर और महिलाओं के पोषण स्तर में सुधार से संबंधित मुद्दों की जाँच करने के लिये एक टास्क फोर्स का गठन किया था। सामाजिक कार्यकर्त्ता और समता पार्टी की पूर्व अध्यक्ष जया जेटली की अध्यक्षता में गठित इस टास्क फोर्स में नीति आयोग के सदस्य और कई सचिव स्तर के अधिकारी शामिल हैं।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

- नेटिव मैरिज एक्ट (Native Marriage Act)
  - विवाह सुधार की दिशा में प्रथम प्रयास बाल विवाह के तीव्र विरोध के रूप में प्रारंभ हुआ। समाज सुधारकों के दबाव में बाल विवाह पर प्रतिबंध लगाने के लिये वर्ष 1872 में नेटिव मैरिज एक्ट पारित किया गया।
  - इस एक्ट में 14 वर्ष से कम आयु की कन्याओं का विवाह वर्जित कर दिया गया।
- सम्मति आयु अधिनियम (Age Consent Act)
  - नेटिव मैरिज़ एक्ट विवाह सुधार की दिशा में बहुत प्रभावी नहीं हो सका, अत: एक पारसी समाज सुधारक वी. एम. मालाबारी के प्रयत्नों के परिणामस्वरूप वर्ष 1891 में सम्मति आयु अधिनियम पारित किया गया।
  - इस अधिनियम में 12 वर्ष से कम आयु की कन्याओं के विवाह पर रोक लगा दी गई।
- शारदा अधिनियम (Sharda Act)
  - समाज सुधारक हर विलास शारदा के अथक प्रयासों से वर्ष 1930 में शारदा अधिनियम पारित किया गया।
  - इस अधिनियम द्वारा 18 वर्ष से कम आयु के बालक तथा 14 वर्ष से कम आयु की बालिका के विवाह को अवैध घोषित कर दिया गया।
- बाल विवाह निरोधक (संशोधन) अधिनियम
  - इस अधिनियम में बालक की विवाह योग्य आयु 18 वर्ष से बढ़ाकर 21 वर्ष एवं बालिका की आयु 14 वर्ष से बढ़ाकर 18 वर्ष कर दी गई।
  - अधिनियम में बाल विवाह करने वालों के विरुद्ध दंड का भी प्रावधान है।

क्या है संवैधानिक दृष्टिकोण?

- विशेष विवाह अधिनियम, 1954 और बाल विवाह निषेध अधिनियम, 2006 भी महिलाओं और पुरुषों के लिये विवाह की न्यूनतम आयु क्रमश: 18 और 21 वर्ष निर्धारित करते हैं।

- कानून विवाह की न्यूनतम आयु के माध्यम से बाल विवाह और नाबालिगों के अधिकारों के दुरुपयोग को रोकते हैं। विवाह के संबंध में विभिन्न धर्मों के व्यक्तिगत कानूनों के अपने मानक हैं, जो अक्सर रीति-रिवाजों को दर्शाते हैं।
- इस्लाम में यौवन प्राप्ति को नाबालिगों के विवाह के लिये व्यक्तिगत कानून के तहत वैध माना जाता है।
- हिंदू धर्म में हिंदू विवाह अधिनियम 1955 की धारा 5 (iii) के तहत वर और वधु की न्यूनतम आयु क्रमश: 21 और 18 वर्ष निर्धारित की गई थी। इस अधिनियम के अनुसार बाल विवाह गैरकानूनी नहीं था लेकिन विवाह में नाबालिग के अनुरोध पर इस विवाह को शून्य घोषित किया जा सकता था।

विवाह योग्य आयु से संबंधित चुनौतियाँ

- पुरुषों और महिलाओं के लिये विवाह की अलग-अलग आयु का प्रावधान कानूनी विमर्श का विषय बनता जा रहा है। इस प्रकार के कानून रीति-रिवाजों और धार्मिक प्रथाओं का एक कोडीकरण है जो पितृसत्ता में निहित हैं।
- विवाह की अलग-अलग आयु, संविधान के अनुच्छेद 14 (समानता का अधिकार) और अनुच्छेद 21 (गरिमा के साथ जीवन जीने का अधिकार) का उल्लंघन करती है।
- विधि आयोग ने वर्ष 2018 मे परिवार कानून में सुधार के एक परामर्श पत्र में तर्क दिया कि पति और पत्नी की अलग-अलग कानूनी आयु रूढ़िवादिता को बढ़ावा देती है।
- विधि आयोग के अनुसार, पति और पत्नी की आयु में अंतर का कानून में कोई आधार नहीं है क्योंकि पति या पत्नी का विवाह में शामिल होने का तात्पर्य हर तरह से समान है और वैवाहिक जीवन में उनकी भागीदारी भी समान होती है।
- महिला अधिकारों हेतु कार्यरत कार्यकर्त्ताओं ने भी तर्क दिया है कि समाज के लिये यह केवल एक रूढ़ि मात्र है कि एक समान आयु में महिलाएँ, पुरुषों की तुलना में अधिक परिपक्व होती हैं और इसलिये उन्हें कम आयु में विवाह की अनुमति दी जा सकती है।
- महिलाओं के खिलाफ भेदभाव के उन्मूलन संबंधी समिति (Committee on the Elimination of Discrimination against Women- CEDAW) जैसी अंतर्राष्ट्रीय संस्थाएँ भी ऐसे कानूनों को समाप्त करने का आह्वान करती हैं जो पुरुषों की अपेक्षा महिलाओं में अलग भौतिक और बौद्धिक परिपक्वता संबंधी विचारों से घिरे हैं।

सामजिक मान्यताएँ

- समाज में ऐसी मान्यता बनी हुई है कि बालिका का विवाह जल्दी कर देने से उसे पथ-भ्रष्ट होने से बचाया जा सकता है।
- महिलाएँ पूर्ण रूप से परिवार की देखभाल करने तथा बच्चों को जन्म देने के लिये ही बनी हैं इसलिये उनका शीघ्र ही विवाह कर देना चाहिये।
- वर्ष 2018 में परिवार कानून में सुधार के संदर्भ में विधि आयोग ने तर्क दिया कि विवाह योग्य अलग-अलग कानूनी मानक होने से "उन रूढ़िवादी मान्यताओं को बल मिलता है जो पत्नियों को पति से कमतर आँकती हैं"।
- महिला अधिकार कार्यकर्त्ताओं ने यह भी तर्क दिया है कि कानून इस रूढ़ि को बनाए रखता है कि महिलाएँ समान आयु के पुरुषों की तुलना में अधिक परिपक्व होती हैं और इसलिये उन्हें जल्द विवाह करने की अनुमति दी जा सकती है।

न्यूनतम आयु में परिवर्तन की आवश्यकता क्यों ?

- यूनिसेफ (UNICEF) के आधिकारिक आँकड़े बताते हैं कि विश्व भर में पाँच वर्ष से कम उम्र के सभी बच्चों में प्रत्येक पाँचवें बच्चे की मृत्यु भारत में होती है। इन आँकड़ों से पता चलता है कि भारत में शिशु मृत्यु दर (IMR) काफी खतरनाक स्तर पर पहुँच गई है।
- संयुक्त राष्ट्र के शिशु मृत्यु दर के अनुमान से संबंधित आँकड़ों के अनुसार, वर्ष 2018 में संपूर्ण भारत में कुल 721,000 शिशुओं की मृत्यु हुई थी, जिसके अर्थ है कि इस अवधि में प्रति दिन औसतन 1,975 शिशुओं की मौत हुई थी।
- वर्ष 2015-16 के राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण (National Family Health Survey-NFHS) के अनुसार, 20-24 आयु वर्ग की महिलाओं में से 48 प्रतिशत का विवाह 20 वर्ष की उम्र में हो जाता है, इतनी छोटी सी उम्र में विवाह होने के पश्चात् गर्भावस्था में जटिलताओं और बाल देखभाल के बारे में जागरूकता की कमी के कारण मातृ और शिशु मृत्यु दर में वृद्धि देखने को मिलती है।
- ध्यातव्य है कि भारत में वर्ष 2017 में गर्भावस्था और प्रसव से संबंधित जटिलताओं के कारण कुल 35000 महिलाओं की मृत्यु हुई थी।

- भारत में जिस समय महिलाओं को उनके भविष्य और शिक्षा की ओर ध्यान देना चाहिये, उस समय उन्हें विवाह के बोझ से दबा दिया जाता है, 21वीं सदी में इस रुढ़िवादी प्रथा में बदलाव की आवश्यकता है, जो कि महिला सशक्तीकरण की दिशा में एक महत्त्वपूर्ण कदम साबित हो सकता है।
- विशेषज्ञ मानते हैं कि महिलाओं के विवाह की न्यूनतम आयु को बढ़ाने से महिलाओं के पास शिक्षित होने, कॉलेजों में प्रवेश करने और उच्च शिक्षा प्राप्त करने हेतु अधिक समय होगा।
- इस निर्णय से संपूर्ण भारतीय समाज खासतौर पर निम्न आर्थिक वर्ग पर इस निर्णय का खासा प्रभाव देखने को मिलेगा।

निष्कर्ष

- उल्लेखनीय है कि महिलाओं के विवाह की उम्र को बढ़ाना महिला सशक्तीकरण और महिला शिक्षा की दिशा में एक महत्त्वपूर्ण कदम हो सकता है, हालाँकि यह भी आवश्यक है कि नियम बनाने के साथ-साथ उनके कार्यान्वयन पर भी ध्यान दिया जाए, क्योंकि भारत में पहले से ही महिलाओं के विवाह की न्यूनतम सीमा 18 वर्ष तय है, किंतु आँकड़े बताते हैं कि अधिकांश क्षेत्रों में इन नियमों का पालन नहीं हो रहा है।

दृष्टि The Vision

आंतरिक सुरक्षा

इस्लामिक स्टेट का पुर्नउभार

संदर्भ

संयुक्त राष्ट्र का अनुमान है कि सीरिया और इराक में 10,000 से अधिक इस्लामिक स्टेट के आतंकवादी सक्रिय है। संयुक्त राष्ट्र ने बताया है कि इस वर्ष इस्लामिक स्टेट के हमलों में काफी वृद्धि हुई है। संयुक्त राष्ट्र आतंकवाद विरोधी प्रमुख व्लादिमीर वोरोन्कोव (Vladimir Voronkov) ने संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में वक्तव्य दिया कि युद्धक्षेत्र में इस्लामिक स्टेट की हार के बावजूद इस आतंकवादी संगठन के छोटे-छोटे स्लीपर सेल स्वतंत्र रूप से पश्चिम एशिया, अफ्रीका सहित कई अन्य देशों में सक्रिय है। वोरोन्कोव के अनुसार, कई अफ्रीकी देशों में इस्लामिक स्टेट का प्रभाव है। विशेषकर लीबिया, कांगो, माली, नाइजर और मोजाम्बिक में इनका बड़ा नेटवर्क है। पश्चिम अफ्रीका में यह संगठन वैश्विक प्रचार का एक प्रमुख केंद्र बना हुआ है।

ध्यातव्य है कि विगत कुछ दिनों में भारत से भी इस्लामिक स्टेट के कई आतंकवादियों को उस समय गिरफ्तार किया गया जब वह लोन वुल्फ अटैक (Lone Wolf Attack) करने की योजना बना रहे थे। भारत से इस्लामिक स्टेट के आतंकियों की गिरफ्तारी चिंता का विषय है क्योंकि आतंकवाद से प्रभावित शीर्ष देशों की सूची में भारत भी शामिल है।

विश्लेषकों का मानना है कि बगदादी की मौत ने इस आतंकवादी संगठन को कमज़ोर किया है किंतु इसे समाप्त मानना एक भूल साबित हुई। इसलिये इस्लामिक स्टेट को आतंकवाद के एक वाहक के रूप में विश्व के समक्ष अभी भी खतरे के रूप में देखा जा रहा है।

इस्लामिक स्टेटः पृष्ठभूमि

- इस्लामिक स्टेट की स्थापना जमात अल-ताव्हिद वल जिहाद के नाम से वर्ष 1999 में हुई मानी जाती है। अमेरिका पर वर्ष 2001 में हुए आतंकवादी हमलों के बाद अमेरिका ने अल-क़ायदा को समाप्त करने के लिये इराक में प्रवेश किया।
- इस मौके का लाभ उठाकर इस्लामिक स्टेट ने अपनी स्थिति को मज़बूत किया। अरब स्प्रिंग के समय संपूर्ण मध्य-पूर्व की तानाशाही सरकारें गंभीर संकट झेल रहीं थी। वर्ष 2011 में सीरिया में असद की तानाशाह सरकार के खिलाफ भी विरोध प्रदर्शन हुए, जो शीघ्र ही गृह-युद्ध में बदल गया।
- इराक भी सद्दाम हुसैन की मृत्यु के बाद अस्थिरता की स्थिति से जूझ रहा था। इराक और सीरिया की सुभेद्य स्थिति उग्रवादी एवं आतंकवादी संगठनों को उर्वर भूमि उपलब्ध करा रही थी। इसी का लाभ उठाकर इस्लामिक स्टेट ने वहाँ के विभिन्न क्षेत्रों पर कब्ज़ा कर लिया तथा वर्ष 2014 में मोसूल पर कब्ज़ा करने के पश्चात् अपने संगठन का नाम परिवर्तित कर इस्लामिक स्टेट ऑफ़ इराक एंड सीरिया (ISIS) कर लिया।
- पश्चिम एशिया प्रमुख रूप से इस्लामी मान्यताओं को मानने वाला क्षेत्र है। किंतु इस क्षेत्र में इस्लाम के भीतर ही लोग विभिन्न समुदायों यथा-शिया, सुन्नी और कुर्द में विभाजित हैं। इस क्षेत्र में विद्यमान विभिन्न समस्याओं की जड़ में अन्य कारकों के साथ-साथ इस सांप्रदायिक संघर्ष को भी एक बड़ा कारक समझा जाता है।

इस्लामिक स्टेट की शक्ति का आधार

- किसी भी संगठन को बनाए रखने के लिये आर्थिक स्रोतों की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। इस्लामिक स्टेट भी इससे भली-भाँति परिचित था। इसी पृष्ठभूमि में IS ने इराक एवं सीरिया के आयल फील्ड पर कब्ज़ा कर लिया। जिससे इस आतंकवादी संगठन को बड़ी मात्रा में धन प्राप्त हुआ।
- इसके अतिरिक्त जबरन वसूली, धार्मिक कर, सुन्नी समर्थक लोगों से आर्थिक सहायता भी इस संगठन के महत्त्वपूर्ण आर्थिक स्रोत बने।
- इस्लामिक स्टेट की सबसे बड़ी ताकत है इसकी युवाओं को आकर्षित करने की क्षमता। विदित हो कि IS ने लड़ाकों की नियुक्ति के लिये बाकायदा नियोक्ताओं की सेवाएँ ले रखी हैं।

- IS इन नियोक्ताओं को धन देता है और बदले में ये नियोक्ता सोशल मीडिया, गुप्त गोष्ठियों आदि के माध्यम से युवाओं को धर्म के नाम पर दिग्भ्रमित करते हैं और एक ऐसी लड़ाई लड़ने के लिये इन्हें प्रेरित करते हैं जिसका उद्देश्य खिलाफत की स्थापना करना है।

इस्लामिक स्टेट का वैश्विक विस्तार

- वर्तमान में इस्लामिक स्टेट का प्रभाव अफ्रीका महाद्वीप के लीबिया, कांगो, माली, नाइज़र और मोजाम्बिक में स्पष्ट रूप से देखा जा रहा है।
- इसी तरह से यूरोप में फ्रांस और ब्रिटेन में इसका प्रसार हो रहा है। अफगानिस्तान में इस्लामिक स्टेट के सहयोगी ने काबुल सहित देश के विभिन्न हिस्सों में कई बड़े आतंकी हमलों को अंजाम दिया है।
- हालाँकि विश्व स्तर पर तथा भारत में इसको अधिक सफलता नहीं मिली लेकिन विश्व के विभिन्न क्षेत्रों में विद्यमान अन्य आतंकी संगठन इससे जुड़ गए हैं।
- IS ने संबद्ध संगठनों को विलायत का नाम दिया, जिसका अर्थ एक प्रशासनिक इकाई के रूप में लिया जा सकता है।

लोन वुल्फ अटैक से तात्पर्य

- इस्लामिक स्टेट के चरमोत्कर्ष के दौर में विश्व में विशेष रूप से पश्चिमी विश्व तथा पूर्वी एशिया में आतंकी घटनाओं में वृद्धि हुई। साथ ही इन घटनाओं को रोकना कठिन हो गया। इस प्रकार के हमलों को किसी व्यक्ति या एक छोटे से समूह द्वारा अंजाम दिया जाता था और इनका किसी भी आतंकवादी संगठन से कोई प्रत्यक्ष संबंध नहीं होता था।
- इस प्रकार के हमलों को लोन वुल्फ अटैक कहा गया। इसमें आतंकी इंटरनेट तथा सोशल मीडिया द्वारा IS की विचारधारा से जुड़ता था और इंटरनेट के माध्यम से ही हमलों के लिये विशेषज्ञता प्राप्त करता था।

वैश्विक शांति को खतरा

- इस्लामिक स्टेट भले ही वर्तमान में इराक एवं सीरिया में कमजोर हो गया है तथा उसके कब्ज़े में कोई क्षेत्र भी नहीं है, इसके बावजूद वह विश्व के समक्ष एक बड़ा खतरा बना हुआ है।
- इस्लामिक स्टेट में शामिल विदेशी लड़ाके जिनकी संख्या 25-30 हजार आँकी जा सकती है, अपने देशों में वापस लौटने में सफल हुए हैं। ये लड़ाके IS की विचारधारा में विश्वास रखते हैं और अपने देश की आंतरिक सुरक्षा के लिये चुनौती बने हुए हैं।
- भारत में IS आतंकी की गिरफ्तारी, श्रीलंका में हुए आतंकी हमले तथा इंडोनेशिया एवं फिलीपींस के आत्मघाती हमलों ने IS के खतरे से विश्व को आगाह किया है।
- इस्लामिक स्टेट के उच्च स्तर के कई आतंकियों के मारे जाने के बावजूद इसने पूर्वी अफगानिस्तान क्षेत्र में तालिबान से भी अधिक आत्मघाती हमलों को अंजाम दिया है। एशिया ही नहीं बल्कि अफ्रीका में भी IS से संबद्ध आतंकी संगठन सक्रिय हैं।
- पूर्व में नाइजीरिया का एक बड़ा आतंकी संगठन बोकोहरम भी IS से संबद्ध था लेकिन कुछ समय पूर्व इससे अलग हुई IS की एक शाखा इस क्षेत्र, विशेषकर उत्तरी नाइजीरिया में अधिक सक्रिय है।
- ध्यातव्य है कि इद्लिब, जहाँ IS सरगना बगदादी को मारा गया, तुर्की सीमा से केवल 50 किमी. की दूरी पर स्थित है, साथ ही तुर्की और सीरिया की सीमा रेखा पर कुर्दिश लड़ाके मौजूद हैं। इससे तुर्की IS के प्रति अधिक सुभेद्य हो जाता है।

इस्लामिक स्टेट और भारत

- बगदादी की वैश्विक विस्तार की कल्पना में उसने भारत को भी खुरासान प्रांत के रूप में शामिल किया था। भारत में इस्लामिक स्टेट के आतंकी का गिरफ्तार होना निश्चित ही चिंता का विषय है।
- अनुमान है कि भारत से 100-200 लोग IS में भर्ती होने के लिये सीरिया, इराक और अफ़ग़ानिस्तान की ओर गए थे। इनकी वापसी के बाद भारत में इनसे खतरा उत्पन्न हो सकता है। इस प्रकार के IS समर्थक भारत में युवाओं को भर्ती करने तथा स्लीपर सेल की भूमिका निभाने एवं साथ ही आवश्यकता पड़ने पर आतंक फैला सकते हैं।
- कुछ समय पूर्व भारत सरकार ने कश्मीर के विशेष राज्य का दर्जा समाप्त कर दिया है, इससे कश्मीर में तनाव की स्थिति बनी हुई है। विश्लेषकों का मानना है कि IS भारत में अपने प्रसार के लिये कश्मीर मुद्दे का दुष्प्रचार कर सकता है।

- इसके अतिरिक्त भारत में सोशल मीडिया विनियमन भी कमज़ोर है, जिससे कोई भी आतंकी संगठन भारत के युवाओं की मनोवृत्ति बदलने, उनको प्रभावित करने तथा उन्हें आतंकी घटनाओं को अंजाम देने के लिये तैयार कर सकता है।

आगे की राह

- जिस इस्लामिक स्टेट को पूरी दुनिया समाप्त मानने लगी थी, अब आतंक के एक नये कलेवर में सबके सामने है। IS के लड़ाके छोटे-छोटे समूहों में पूरे विश्व में फैल रहे हैं। वैसे भी इस्लामिक स्टेट पिछले कुछ समय से लगातार भारत को निशाना बनाने के अपने इरादों को ज़ाहिर करता आ रहा है। भारत को इसे रोकने के लिये एक्शन प्लान बनाना चाहिये।
- दरअसल, युवावस्था में व्यक्ति अभूतपूर्व ऊर्जा महसूस करता है और जिस भी दिशा में इस ऊर्जा का उपयोग किया जाए वहाँ उल्लेखनीय परिणाम दिखने को मिलते हैं, सरकार को IS की इसी नस पर चोट करनी होगी, युवाओं को IS के विचारों से दूर रखना होगा।
- सरकार यदि अपने एक्शन प्लान के तहत IS के खिलाफ़ एक जागरूकता अभियान चलाए तो यह काफी कारगर होगा, जगह-जगह सेमिनार हो युवाओं को सूफी परंपरा और वहाबी परंपरा का मर्म बताया जाना चाहिये।

नोट :